* श्रीहरिः *

वक्तव्य

भजन-संग्रहका यह चौथा भाग है। इसमें कुछ ऐसे राम-रँगीले मुसल्मान-भक्तोंकी वाणीका सङ्कलन किया गया है, जिनके बारेमें श्रीभारतेन्दुजीने कहा है—

'इन मुसल्मान हरिजननपै कोटिन हिंदुन वारिये।'

वास्तवमें, अनेक ऐसे मुसल्मान हरिजन हो गये हैं, जिन्होंने कृष्ण-मन्दिरमें मक्केका नूर देखा और व्रज-वीथियोंकी रजमें लोट-लोटकर उस प्यारेको रिझानेके लिये एक निराली ही नमाज़ पढ़ी, ये दो प्रकारके सन्त हुए हैं।

एक तो रसखानिकी रसिक टोलीके, जिन्होंने व्रजराज-कुमारकी बाँकी सूरतपर

अपनेको निसार कर दिया और दूसरे यारी या दरिया साहबके पन्थके, जिन्होंने अपने राम भर्तारको रिझानेके लिये कबीरकी सुहागिनका साज सजाया। दोनों ही अपने-अपने स्थानपर अद्वितीय हैं, दोनों ही वन्दनीय हैं।

मुसलमान-भक्तोंके वाणी-संग्रहमें कई विद्वानोंने कबीरदासजीको भी लिया है, पर यह विवादास्पद विषय होनेपर कि वे मुसलमान थे या हिन्दू, उन्हें मैंने इस संग्रहमें नहीं लिया है। पहले भागमें तो सन्त-शिरोमणि कबीरके अनियारे शब्द आ ही गये हैं।

इस छोटे-से संग्रहसे यदि प्रेम-मार्गियोंको कुछ भी रस मिला, तो मैं अपने तुच्छ प्रयासको सफल समझूँगा।

दिल्ली
श्रीरामनवमी, १९९०

वियोगी हरि

* श्रीहरिः *

अकारादि-क्रमसे विषय-सूची

भजन　　　　पृष्ठ-संख्या

रहीम

भजन पृष्ठ-संख्या

रसखानि

यारी साहब

भजन | पृष्ठ-संख्या

खुसरो

दरिया साहब (मारवाड़वाले)

भजन		पृष्ठ-संख्या

कारेखाँ

भजन	पृष्ठ-संख्या

भजन	पृष्ठ-संख्या

भजन	पृष्ठ-संख्या

बुल्लेशाह

ॐ श्रीहरिः

भजन-संग्रह

(चौथा भाग)

रहीम

(१)

छबि आवन मोहनलालकी ।

काछिनि काछे कलित मुरलि कर,

पीत पिछौरी सालकी ॥

बंक तिलक केसरकौ कीनें,

दुति मानों बिधु बालकी ।

बिसरत नाहिं सखी, मो मनतें,

चितवनि नयन बिसालकी ॥

नीकी हँसनि अधर सुधरनिकी,
छबि छीनीं सुमन गुलालकी ।
जलसों डारि दियो पुरइन पर,
डोलनि मुकता-मालकी ॥
आप मोल बिन मोलनि डोलनि,
बोलनि मदनगोपालकी ।
यह सुरूप निरखै सोइ जानै,
या 'रहीम' के हालकी ॥

(२)

कमलदल-नैननिकी उनमानि ।
बिसरति नाहिं सखी, मो मनतें,
मन्द-मन्द मुसुकानि ॥
यह दसननि-दुति चपलाहूतें,
महाचपल चमकानि ।
बसुधाकी बस करी मधुरता,
सुधा-पगी बतरानि ॥

चढ़ी रहै चित उर बिसालकी,
मुकुत-माल थहरानि ।
नृत्य-समय पीताम्बरहूकी,
फहरि-फहरि फहरानि ॥
अनुदिन श्रीबृन्दाबन ब्रजतें,
आवन आवन जानि ।
अब 'रहीम' चिततें न टरति है,
सकल स्यामकी बानि ॥

(३)

शरद्-निशि-निशीथे चाँदकी रोशनाई,
सघन-वन-निकुञ्जे कान्ह बंसी बजाई ।
रति, पति, सुत, निद्रा, साइयाँ छोड़ भागी,
मदन-शिरसि भूयः क्या बला आन लागी ॥

(४)

कलित ललित माला वा जवाहर जड़ा था,
चपल चखनवाला चाँदनीमें खड़ा था ।

कटि-तट-बिच मेला पीत सेला नवेला ,
अलिबन अलबेला यार मेरा अकेला ॥

(५)

दृग छकित छबीली छैलराकी छरी थी ,
मणि-जटित रसीली माधुरी मूँदरी थी ।
अमल कमल ऐसा खूबसे खूब देखा ,
कहि न सकी जैसा श्यामका हस्त देखा ॥

(६)

कठिन कुटिल काली देख दिलदार जुलफें ,
अलि-कलित-विहारी आपने जीकी कुलफें ।
सकल शशि-कलाको रोशनी-हीन लेखौं ,
अहह ब्रजललाको किस तरह फेर देखौं ॥

(७)

जरद बसनवाला गुलचमन देखता था ,
झुक-झुक मतवाला गावता रेखता था ।

श्रुति युग चपलासे कुण्डलें झूमते थे,
नयन कर तमाशे मस्त ह्वै घूमते थे॥

(८)

तरल तरनि-सी हैं तीर-सी नोकदारैं,
अमल कमल-सी हैं दीर्घ हैं दिल बिदारैं।
मधुर मधुप हेरैं माल मस्ती न राखैं,
बिलसति मन मेरे सुन्दरी स्याम आँखैं॥

(९)

भुजग जुग किधौं हैं काम कमनैत सोहैं,
नटवर ! तव मोहैं बाँकुरी मान भौंहैं।
सुनु सखि, मृदु बानी बेदुरुस्ती अकिलमें,
सरल-सरल सानी कै गई सार दिलमें॥

(१०)

पकरि परम प्यारे साँवरेको मिलाओ,
असल अमृत-प्याला क्यों न मुझको पिलाओ ?

इति वदति पठानी मनमथाङ्गी विरागी,
मदन-शिरसि भूयः क्या बला आन लागी ॥

(११)

पट चाहै तन, पेट चाहत छदन, मन
चाहत है धन, जेती सम्पदा सराहिबी ।
तेरोई कहायकैं, रहीम कहै दीनबन्धु,
आपनी बिपत्ति जाय काके द्वार काहिबी ?
पेट भरि खायो चाहै, उद्यम बनायो चाहै,
कुटुँब जियायो चाहै, काढ़ि गुन लाहिबी ।
जीविका हमारी जोपै औरनके कर डारो,
ब्रजके बिहारी ! तो तिहारी कहाँ साहिबी ॥

रसखानि

(१)

मानुष हौं तौ वही रसखानि,
बसौं ब्रज गोकुल गाँवके ग्वारन ।
जो पसु हौं तौ कहा बसु मेरो,
चरौं नित नन्दकी धेनु-मँझारन ॥
पाहन हौं तौ वही गिरिकौ,
जो धर्यो कर छत्र पुरन्दर-धारन ।
जो खग हौं तौ बसेरो करौं मिलि,
कालिंदी-कूल-कदम्बकी डारन ॥

(२)

या लकुटी अरु कामरियापर,
राज तिहूँ पुरकौ तजि डारौं ।
आठहु सिद्धि नवो निधिकौ सुख,
नन्दकी गाइ चराइ बिसारौं ॥

रसखानि, कबौं इन आँखिनसों,
ब्रजके बन-बाग-तड़ाग निहारौं।
कोटिक हौं कलधौतके धाम,
करीलकी कुञ्जन ऊपर वारौं॥

(३)

गावैं गुनी, गनिका, गन्धर्व, औ,
सारद सेष सबै गुन गावैं।
नाम अनन्त गनन्त गनेस-ज्यों,
ब्रह्मा त्रिलोचन पार न पावैं॥
जोगी, जती, तपसी अरु सिद्ध,
निरन्तर जाहि समाधि लगावैं।
ताहि अहीरकी छोहरियाँ,
छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं॥

(४)

सेस, महेस, गनेस, दिनेस,
सुरेसहु जाहि निरन्तर गावैं।

जाहि अनादि, अनन्त, अखण्ड,
अछेद, अभेद सुबेद बतावैं ॥
नारद-से सुक ब्यास रटैं,
पचि हारे, तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीरकी छोहरियाँ,
छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं ॥

(५)

खञ्जन-नैन फँसे पिंजरा-छबि,
नाहिं रहैं थिर कैसेहुँ माई !
छूटि गयी कुल कानि सखी,
रसखानि, लखी मुसुकानि सुहाई ॥
चित्र-कढ़े-से रहैं मेरे नैन,
न बैन कढ़ैं, मुख दीनी दुहाई।
कैसी करौं, जिन जाव अली,
सब बोलि उठैं, यह बावरी आई ॥

(६)

कानन दै अँगुरी रहिबो,

जबहीं, मुरली-धुनि मन्द बजैहै ;

मोहिनी-तानन सों रसखानि,

अटा चढ़ि गोधन गैहै तौ गैहै ।

टेरि कहौं सिगरे ब्रज-लोगनि,

कालिह कोऊ कितनों समुझैहै ;

माई री, वा मुखकी मुसुकानि,

सँभारी न जैहै न जैहै न जैहै ॥

(७)

आजु री, नन्दलला निकस्यो,

तुलसी-बनतें बनकैं मुसकातो ।

देखे बनै न बनै कहते अब,

सो सुख जो मुखमें न समातो ॥

हौं रसखानि, बिलोकिबेकों,

कुल-कानिको काज कियो हिय हातो ।

आय गई अलबेली अचानक,
ऐ भटू, लाजकौ काज कहा तो? ॥

(८)

धूरि-भरे अति सोभित स्यामजू,
तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत-खात फिरैं अँगना,
पगपैंजनी बाजती, पीरी कछोटी ॥
वा छबिकों रसखानि बिलोकत,
वारत काम-कलानिधि-कोटी।
कागके भाग कहा कहिए,
हरि-हाथसों लै गयो माखन-रोटी ॥

(९)

ब्रह्म मैं ढूँढ़्यो पुरानन गानन,
बेद-रिचा सुनि चौगुने चायन।
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितै,
वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन ॥

टेरत हेरत हारि परयौ,

रसखानि बतायो न लोग-लुगायन ।

देखौ, दुरयौ वह कुंज-कुटीरमें,

बैठ्यो पलोटत राधिका-पायन ॥

(१०)

द्रौपदि औ गनिका, गज, गीध,

अजामिलसों कियो सो न निहारो ।

गौतम-गेहिनी कैसे तरी,

प्रहलादकौ कैसे हरयौ दुख-भारो ॥

काहे को सोच करै रसखानि,

कहा करिहै रवि-नन्द बिचारो ?

कौनकी संक परी है जु माखन-

चाखनहारो है राखनहारो ॥

(११)

जा दिनतें निरख्यौ नँद-नंदन,

कानि तजी घर-बन्धन छूट्यो ।

चारु बिलोकनिकी निसि मार,
सँभार गयी मन मारने लूट्यो ॥
सागरकौं सरिता जिमि धावति,
रोकि रहे कुलकौ पुल टूट्यो ।
मत्त भयो मन संग फिरै,
रसखानि सुरूप सुधा-रस घूट्यो ॥

(१२)

बेनु बजावत, गोधन गावत,
ग्वारनके सँग गोमधि आयो ।
बाँसुरीमें उन मेरोइ नाम लै,
साथिनके मिस टेरि सुनायो ॥
ऐ सजनी, सुनि सासके त्रासनि,
नन्दके पास उसासनि आयो ।
कैसी करौं रसखानि नहीं,
चित चैन नहीं, चितचोर चुरायो ॥

(१३)

बैन वही उनकौ गुन गाइ,
औ कान वही उन नैनसों सानी ।
हाथ वही उन गात सरैं
अरु पाइ वही जु वही अनुजानी ॥
जान वही उन प्रानके संग, औ
मान वही जु करै मनमानी ।
त्यों रसखानि वही रसखानि,
जु है रसखानि, सो है रसखानी ॥

यारी साहब

(१)

बिरहिनी मंदिर दियना बार ।
बिन बाती बिन तेल जुगतसों,
बिन दीपक उँजियार ॥
प्रानपिया मेरे गृह आये,
रचि-पचि सेज सँवार ॥
सुखमन सेज परम तत रहिया,
पिय निरगुन निरकार ॥
गावहु री मिलि आनँद-मंगल,
'यारी' मिलके यार ॥

(२)

बिन बंदगी इस आलममें,
खाना तुझे हराम है रे !
बंदा करै सोइ बंदगी,
खिदमतमें आठों जाम है रे !

'यारी' मौला बिसारके,
तू क्या लागा बेकाम है रे !
कुछ जीते-जी बंदगी कर ले,
आखिरको गोर मुकाम है रे !

(३)

दिन-दिन प्रीति अधिक मोहिं हरिकी ।
काम-क्रोध-जंजाल भसम भयो,
बिरह-अगिन लगि धधकी ॥
धधकि-धधकि सुलगति अति निर्मल,
झिलमिल-झिलमिल झलकी ॥
झरि-झरि परत अँगार अधर 'यारी'
चढ़ि अकास आगे सरकी ॥

(४)

दोउ मूँदके नैन अंदर देखा,
नहिं चाँद सूरज दिन रात है रे !

रोशन समा बिनु तेल-बाती,
उस जोतिसों सबै सिफाति है रे !!
गोता मार देखो आदम,
कोउ और नाहिं संग-साथि है रे !
'यारी' कहै, तहकीक किया,
तू मलकुलमौतकी जाति है रे !!

(५)

हमारे एक अलह पिय प्यारा है ।
घट घट नूर उसी प्यारेका,
जाका सकल पसारा है ॥
चौदह तबक जाकी रोशनाई,
झिलमिल जोत सितारा है ॥
बेनमून बेचून अकेला,
हिंदु तुरकसे न्यारा है ॥
सोइ दरबेस दरस जिन पायो,
सोई मुसलिम सारा है ॥

आवै न जाय, मरै नहिं जीवै,
'यारी' यार हमारा है ॥

(६)

गुरुके चरनकी रज लैके,
दोउ नैननके बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजियार हुआ,
निरंकार पियाको देख लीया ॥
कोटि सूरज तहँ छिपे घने,
तीन लोक-धनी धन पाइ पीया।
सतगुरुने जो करी किरपा,
मरिके 'यारी' जुग-जुग जीया ॥

(७)

हौं तो खेलौं पियासँग होरी।
दरस परस पतिब्रता पियकी,
छबि निरखत भइ बौरी ॥

सोरह कला सँपूरन देखौं,
रबि ससि भे इक ठौरी ॥
जबतें दृष्टि परयो अविनासी
लागी रूप-ठगौरी ॥
रसना रटति रहति निसि-बासर,
नैन लगे यहि ठौरी ॥
कह 'यारी' यादि करु हरिकी,
कोइ कहैं सो कहौरी ॥

(८)

झिलमिल-झिलमिल बरसै नूरा,
नूर-जहूर सदा भरपूरा ।
रुनझुन-रुनझुन अनहद बाजै,
भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजै ॥
रिमझिम-रिमझिम बरसै मोती,
भयो प्रकास निरंतर जोती ।
निर्मल निर्मल निर्मल नामा,
कह 'यारी' तहँ लियो बिस्रामा ॥

(९)

रसना, राम कहत तैं थाको।

पानी कहे कहुँ प्यास बुझति है,

प्यास बुझै जदि चाखो ॥

पुरुष-नाम नारी ज्यों जानैं,

जानि-बूझि नहिं भाखो।

दृष्टीसे मुष्टी नहिं आवै,

नाम निरंजन वाको ॥

गुरु-परताप साधुकी संगति,

उलटि दृष्टि जब ताको।

'यारी' कहै, सुनो भाई संतो,

बज्र बेधि कियो नाको ॥

(१०)

निर्गुन चुनरी निर्बान,

कोउ ओढ़ै संत सुजान ॥

षट दर्शनमें जाइ खोजो,
और बीच हैरान ।
जोति-सरूप सुहागिन चुनरी,
आव बधू धरि ध्यान ॥
हद बेहदके बाहर 'यारी'
संतनको उत्तम ज्ञान ।
कोऊ गुरुगम ओढ़ै चुनरिया,
निर्गुन चुनरी निर्बान ॥

(११)

आरति करो मन आरति करो !
गुरु-प्रताप साधुकी संगति,
आवागमनतें छूटि पड़ो ॥
अनहद ताल आदि सुध बानी,
बिनु जिभ्या गुन बेद पढ़ो ।
आपा उलटि आतमा पूजो,
त्रिकुटी न्हाइ सुमेर चढ़ो ॥

सारँग सेत सुरतिसों राखो,
मन पतंग होइ अजर जरो ।
ज्ञानकै दीप बरै बिनु बाती,
कह 'यारी' तहँ ध्यान धरो ॥

(१२)

जोगी जुगति जोग कमाव ।
सुखमना पर बैठि आसन,
सहज ध्यान लगाव ॥
दृष्टि सम करि सुन्न सोवो,
आपा मेटि उड़ाव ।
प्रगट जोति अकार अनुभव,
सब्द सोहं गाव ॥
छोड़ि मठको चलहु जोगी,
बिना पर उड़ि जाव ।
यारी कहै, यह मत बिहंगम,
अगम चढ़ि फल खाव ॥

(१३)

मन मेरो सदा खेलै नटबाजी,
चरन कमल चित राजी ।
बिनु करताल पखावज बाजै,
अगम पंथ चढ़ि गाजी ॥
रूप बिहीन सीस बिनु गावै,
बिनु चरनन गति साजी ।
बाँस सुमेरु सुरतिकै डोरी,
चित चेतन सँग चेला ॥
पाँच पचीस तमासा देखहिं,
उलटि गगन चढ़ि खेला ।
'यारी' नट ऐसो बिधि खेलै,
अनहद ढोल बजावै ॥
अनँत कला अवगति अनमूरति,
बानक बनि-बनि आवै ॥

(१४)

मन ग्वालिया, सत सुकृत तत दुहि लेह ॥
नैन-दोहनि रूप भरि-भरि,
सुरति सब्द सनेह ।
निझर झरत अकास ऊठत,
अधर अधरहिं देह ॥
जेहि दुहत सेस महेस ब्रह्मा,
कामधेनु बिदेह ।
'यारी' मथके लियो माखन,
गगन मगन भखेह ॥

(१५)

चंद-तिलक दिये सुंदरि नारी,
सोइ पतिब्रता पियहिं पियारी ।
कंचन-कलस धरे पनिहारी,
सीस सुहाग भाग उँजियारी ॥

सब्द-सेंदुर दै माँग सँवारी,
बेंदी अचल टरत नहिं टारी।
अपन रूप जब आप निहारी,
'यारी' तेज-पुंज उँजियारी॥

(१६)

तू ब्रह्म चीन्हो रे ब्रह्मज्ञानी।
समुझि-बिचारि देखु नीके करि;
ज्यों दर्पनमधि अलख निसानी।
कहै 'यारी' सुनो ब्रह्मगियानी,
जगमग जोति निसानी॥

(१७)

उरध मुख भाठी, अवटौं कौनी भाँति।
अर्ध उर्ध दोउ जोग लगायो,
गगन-मँडल भयो माठ॥
गुरु दियो ज्ञान, ध्यान हम पायो,
कर करनीकर ठाट॥

हरिके मद मतवाल रहत है,
चलत उबटकी बाट ॥
आपा उलटिके अमी चुवाओ,
तिरबेनीके घाट ॥
प्रेम-पियाला सुतिभरि पीवो,
देखो उलटी बाट ॥
पाँच तत्त इक जोति समाने,
धर छहवो मन हाथ ॥
कह 'यारी' सुनियो भाइ संतो,
छकि-छकि रहि भयो मात ॥

(१८)

राम रमझनी यारी जीवके ॥
घटमें प्रान अपान दुहाई,
अरध उरध आवै अरु जाई ॥
लेके प्रान अपान मिलावै,
वाही पवनतें गगन गरजावै ॥

गरजै गगन जो दामिनि दमकै,

मुक्ताहल रिमझिम तहँ बरखै ॥

वा मुक्तामहँ सुरति पिरोवै,

सुरति सब्द मिलि मानिक होवै ॥

मानिक जोति बहुत उँजियारा,

कह यारी, सोइ सिरजनहारा ॥

साहब सिरजनहार गुसाईं,

जामें हम, सोइ हममाहीं ॥

जैसे कुंभ नीर बिच भरिया,

बाहर-भीतर खालिक दरिया ॥

उठ तरंग तहँ मानिक मोती,

कोटिन चंद सूरकै जोती ॥

एक किरिनका सकल पसारा,

अगम पुरुष सब कीन्ह नियारा ॥

उलटि किरिन जब सूर समानी,

तब आपनि गति आपुहिं जानी ॥

कह यारी कोई अवर न दूजा,
आपुहिं ठाकुर आपुहिं पूजा ॥
पूजा सत्तपुरुषका कीजै,
आपा मेटि चरन चित दीजै ॥
उनमुनि रहनि सकलको त्यागी,
नवधा प्रीति बिरह बैरागी ॥
बिनु बैराग भेद नहिं पावै,
केतो पढ़ि-पढ़ि रचि-रचि गावै ॥
जो गावै ताको अरथ बिचारै,
आपु तरै, औरनको तारै ॥

(१९)

सतगुरु है सत पुरुष अकेला,
पिंड ब्रह्मांडके बाहर मेला ॥
दूरतें दूर, ऊँचतें ऊँचा,
बाट न घाट गली नहिं कूचा ॥

आदि न अंत मध्य नहिं तीरा,
अगम अपार अति गहिर गँभीरा ॥
कच्छ दृष्टि तहँ ध्यान लगावै,
पलमहँ कीट भृंग होइ जावै ॥
जैसे चकोर चंदके पासा,
दीसै धरती बसै अकासा ॥
कह यारी ऐसे मन लावै,
तब चातक स्वाँती-जल पावै ॥

(२०)

सुन्नके मुकाममें बेचूनकी निसानी है,
जिकिर रूह सोई अनहद बानी है।
अगमको गम्म नहीं झलक पेसानी है,
कहै यारी, आपा चीन्है सोई ब्रह्मज्ञानी है॥

(२१)

उड़ु उड़ु रे बिहंगम चढ़ु अकास।
जहँ नहिं चाँद-सूर निसि-बासर,

सदा अमरपुर अगम बास ॥
देखै उरध अगाध निरंतर
हरष सोक नहिं जमकै त्रास ।
कह 'यारी' तहँ बधिक-फाँस नहिं,
फल खायो जगमग परकाम ॥

(२२)

गयो सो गयो, बहुरि नहिं आयो ।
दूरितें अंतर गवन कियो,
तिहुँ लोक दिखायो ॥
तेहूँतें आगे दूरितें दूरि,
परेतें परं जाइ छायो ॥
यारी कहै अति पूरन तेजा,
सो देखि सरूप पतंग समायो ॥
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै,
हलै न टलै तहवाँ ठहरायो ॥

(२३)

एक कहो सो अनेक ह्वै दीसत,
एक अनेक धरे है सरीरा ॥
आदि हि तौं फिर अंतहु भी
मद्ध सोई हरि गहिर गँभीरा ॥
गोप कहो सो अगोप सों देखो,
जोतिसरूप विचारत हीरा ॥
कहे सुने बिनु कोइ न पावै,
कहिके सुनावत 'यारी' फ़कीरा ॥

(२४)

देखु विचारि हिये अपने नर,
देह धरो तौ कहा बिगरो है ॥
यह मट्टीका खेल-खिलौना बनो,
एक भाजन, नाम अनंत धरो है ॥
नेक प्रतीति हिये नहिं आवति,
भर्म भूलो नर अवर करो है ॥

भूषन ताहि गलाइके देखु,
'यारी' कंचन ऐनको ऐन धरो है ॥

(२५)

आँखी सेती जो भी देखिये,
सो तो आलम फ़ानी है ॥
कानोंसे भी जो सुनिये रे,
सो तो जैसे कहानी है ॥
इस बोलतेको उलटि देखै,
सोइ आरिफ़ सोइ ज्ञानी है ॥
यारी कहै, यह बूझि देखा,
और सबै नादानी है ॥

(२६)

जहँ मूल न डार न पात है रे,
बिन सींचे बाग सहज फूला ।
बिन डाँड़ीका फूल है रे,
निर्बासके बास भँवर भूला ॥

दरियावके पार हिंडोलना रे,
कोउ बिरही बिरला जा झूला ।
यारी कहै, इस झूलनेमें
झूलै कोऊ आसिक दोला ॥

(२७)

जबलग खोजै चला जावै,
तबलग मुद्दा नहिं हाथ आवै ।
जब खोज मरै तब घर करै,
फिर खोज पकरके बैठ जावै ॥
आपमें आपको आप देखै,
और कहूँ नहिं चित्त जावै ।
'यारी' मुद्दा हासिल हुआ,
आगेको चलना क्या भावै ॥

(२८)

अंधा पूछे आफ़ताबको रे,
उसे किस मिसाल बतलाइये जी ?

वा नूर समान नहीं और,
कवने तमसील सुनाइये जी ॥
सब आँधरे मील दलील करैं,
बिन दीदा दीदार न पाइये जी ।
'यारी' अंदर यकीन बिना,
इलमसे क्या बतलाइये जी ?॥

(२९)

हम तो एक हुबाब हैं रे,
साकिन बहरके बीच सदा ।
दरियावके बीच दरियावकी मौज है,
बाहर नाहीं गैर खुदा ॥
उठनेमें हुबाब है, देखो,
मिटनेमें मुतलक़ सौदा ।
हुबाब तो ऐन दरियाव 'यारी'
वोहि नाम धरो है बुदबुदा ॥

(३०)

आबके बीच निमक जैसे,
सबलो है येहि मिलि जावै।
यह भेदकी बात अवर है रे,
यह बात मेरे नहिं मन भावै॥
गवास होइके अंदर धँसई,
आदर सँवारके जोति लावै।
'यारी' मुद्दा हासिल हूआ,
आगेको चलना क्या भावै॥

(३१)

गगन-गुफामें बैठिके रे,
उलटिके अपना आप देखै।
अजपा जपै बिन जीभसों रे,
बिन नैन निरंजन रूप लेखै॥
जोति बिना दीपक है रे,
दीपक बिना जगमग पेखै।

'यारी' अलख अलेख है रे,
भेषके भीतर भेष भेषै ॥

(३२)

गगन-गुफामें बैठिके रे,
अजपा जपै बिन जीभ सेती ।
त्रिकुटी संगम जोति है रे,
तहँ देखि लेवै गुरु ज्ञान सेती ॥
सुन्न गुफामें ध्यान धरै,
अनहद सुनै बिन कान सेती ।
'यारी' कहै, सो साधु है रे,
बिचार लेवै गुरु ध्यान सेती ॥
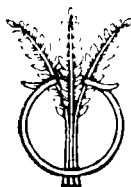
खुसरो

(१)

बहुत रही बाबुल-घर दुलहिन,
चल, तेरे पीने बुलाई ।
बहुत खेल खेली सखियनसों,
अंत करी लरकाई ॥
न्हाय-धोयके बस्तर पहिरे,
सब ही सिंगार बनाई ।
बिदा करनको कुटुँब सब आये,
सिगरे लोग लुगाई ॥
चार कहारन डोली उठाई,
संग पुरोहित नाई ।
चले ही बनैगी होत कहा है,
नैनन नीर बहाई ॥
अंत बिदा है चलिहै दुलहिन,
काहूकी कछु न बसाई ।
मौज खुसी सब देखत रह गये,
मात पिता औ भाई ॥

मोरि कौन सँग लगन धराई,
धन-धन तोरि है खुदाई ।
बिन माँगे मेरी मँगनी जो दीन्ही,
पर-घरकी जो ठहराई ॥
अँगुरी पकरि मोरा पहुँचा भी पकरे,
कँगना अंगूठी पहराई ।
नौशाके सँग मोहि कर दीन्हीं,
लाज सँकोच मिटाई ॥
सोना भी दीन्हा रूपा भी दीन्हा,
बाबुल दिल-दरियाई ।
गहेल गहली डोलति आँगनमें,
अचानक पकर बैठाई ॥
बैठत मलमल कपरे पहनाये,
केसर तिलक लगाई ।
खुसरो चली ससुरारी सजनी,
संग नहीं कोइ जाई ॥

दरिया साहब (मारवाड़वाले)

(१)

कहा कहूँ मेरे पिउकी बात !
जो रे कहूँ सोइ अंग सुहात ।
जब मैं रही थी कन्या कारी,
तब मेरे करम हता सिर भारी ॥
जब मेरे पिउसे मनसा दौड़ी,
सतगुरु आन सगाई जोड़ी ।
तब मैं पिउका मंगल गाया,
जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥
हथलेवा दै बैठी संगा,
तब मोहिं लीन्हीं बायें अंगा ।
जन 'दरिया' कहै, मिट गई दूती,
आपा अरपि पीउ सँग सूती ॥

(२)

जाके उर उपजी नहिं भाई !
सो क्या जानै पीर पराई ?

ब्यावर जानै पीरकी सार,
बाँझ नार क्या लखै बिकार।
पतिव्रता पतिको ब्रत जानै,
बिभचारिन मिल कहा बखानै ?
हीरा पारख जौहरि पावै,
मूरख निरखके कहा बतावै ?
लागा घाव कराहै सोई,
कौतुकहारके दर्द न कोई।
राम नाम मेरा प्रान-अधार,
सोई राम-रस-पीवनहार।
जन 'दरिया' जानैगा सोई;
प्रेमकी भाल कलेजे पोई॥

(३)

जो धुनिया तौ भी मैं राम तुम्हारा।
अधम कमीन जात मति-हीना,
तुम तौ हौ सिरताज हमारा॥

कायाका जंत्र सब्द मन मुठिया,
सुखमन ताँत चढ़ाई।
गगन-मँडलमें धुनिया बैठा,
मेरे सतगुरु कला सिखाई॥
पाप पान हर कुबुध काँकड़ा,
सहज-सहज झड़ जाई।
घुंडी गाँठ रहन नहिं पावै,
इकरंगी होय आई॥
इकरँग हुआ, भरा हरि चोला,
हरि कहै, कहा दिलाऊँ?
मैं नाहीं मेहनतका लोभी,
बकसो मौज भक्ति निज पाऊँ॥
किरपा करि हरि बोले बानी,
तुम तौ हौ मम दास।
'दरिया' कहै, मेरे आतम भीतर
मेलो राम भक्त-विस्वास॥

(४)

आदि अन्त मेरा है राम,

उन बिन और सकल बेकाम ।

कहा करूँ तेरा बेद-पुराना,

जिन है सकल सकत बरमाना ।

कहा करूँ तेरी अनुभौ-बानी,

जिनतें मेरी बुद्धि भुलानी ।

कहा करूँ ये मान-बड़ाई,

राम बिना सब ही दुखदाई ।

कहा करूँ तेरा सांख्य औ जोग,

राम बिना सब बंधन रोग ।

कहा करूँ इन्द्रिनका सुक्ख,

राम बिना देवा सब दुक्ख ।

'दरिया' कहै, राम गुरुमुखिया,

हरि बिन दुखी, रामसँग सुखिया ॥

(५)

बाबुल कैसे बिसरा जाई ?
जदि मै पति-सँग रल खेलूँगी,
आपा धरम समाई ।
सतगुरु मेरे किरपा कीन्ही,
उत्तम बर परनाई ;
अब मेरे साईंको सरम पड़ैगी,
लेगा चरन लगाई ॥
तैं जानराय मै बाली भोली,
तैं निर्मल मैं मैली ;
तैं बतरावै, मैं बोल न जानूँ,
भेद न सकूँ सहेली ।
तैं ब्रह्म-भाव मै आतम-कन्या,
समझ न जानूँ बानी ;
'दरिया' कहै, पति पूरा पाया,
यह निश्चय करि जानी ॥

(६)

पतिव्रता पति मिली है लाग,
जहँ गगन-मँडलमें परमभाग ।
जहँ जल बिन कँवला बहु अनंत,
जहँ बपु बिनु भौंरा गुंजरंत ।
अनहद बानी जहँ अगम खेल,
जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल ।
जहँ अनहद सबद है करत घोर,
बिनु मुख बोलै चात्रिक मोर ।
जहँ बिन रसना गुन बदति नारि,
बिन पग पातर निरतकारि ।
जहँ जल बिन सरवर भरा पूर,
जहँ अनंत जोत बिन चंद-सूर ।
बारह मास जहँ रितु बसंत,
धरैं ध्यान जहँ अनँत संत ।

त्रिकुटी सुखमन जहँ चुवत छीर,
बिन बादल बरसै मुक्ति नीर।
अमरत-धारा जहँ चलै सीर,
कोई पावै बिरला संत धीर।
ररंकार धुन अरूप एक,
सुरत गही उनहीकी टेक।
जन 'दरिया' बैराट चूर,
जहँ बिरला पहुँचै संत सूर॥

(७)

संतो, कहा गृहस्थ कहा त्यागी।
जेहि देखूँ तेहि बाहर-भीतर,
घट-घट माया लागी।
माटीकी भीत, पवनका थंभा,
गुन-औगुनसे छाया।
पाँच तत्त आकार मिलाकर
सहजैं गिरह बनाया।

मन भयो पिता, मनसा भई माई,
दुख-सुख दोनों भाई ;
आसा-तृस्ना-बहनें मिलकर,
गृहकी सौंज बनाई ।
मोह भयो पुरुष, कुबुधि भई घरनी,
पाँचो लड़का जाया ;
प्रकृति अनंत कुटुम्बी मिलकर,
कलहल बहुत मचाया ।
लड़कोंके सँग लड़की जाई,
ताका नाम अधीरी ;
बनमें बैठी घर-घर डोलै,
स्वारथ-संग खपी री ।
पाप-पुन्य दोउ पार-पड़ोसी,
अनँत बासना नाती ;
रागद्वेषका बंधन लागा,
गिरह बना उतपाती ।

कोइ गृह माँड़ि गिरहमें बैठा,
बैरागी बन बासा ;
जन 'दरिया' इक राम-भजन बिन
घट-घटमें घर-बासा ॥

(८)

सब जग सोता सुध नहिं पावै,
बोलै सो सोता बरड़ावै ।
संसय मोह भरमकी रैन,
अंध धुंध होय सोते ऐन ।
जप तप संजम औ आचार,
यह सब सुपनेके ब्यौहार ।
तीर्थ दान जग प्रतिमा सेवा,
यह सब सुपना लेवा-देवा ।
कहना-सुनना, हार औ जीत,
पछा-पछी सुपनो बिपरीत ।

चार बरन औ आश्रम चार,
सुपना-अन्तर सब ब्यौहार ।
षट दरसन आदी भेद-भाव,
सुपना-अन्तर सब दरसाव ।
राजा राना तप बलवंता,
सुपना माहीं सब बरतंता ।
पीर औलिया सबै सयाना,
ख्वाबमाहिं बरतै बिधि नाना ।
काजी सैयद औ सुलताना,
ख्वाबमाहिं सब करत पयाना ।
सांख्य, जोग औ नौधा भकती,
सुपनामें इनकी इक बिरती ।
काया-कसनी दया औ धर्म,
सुपने सुर्ग औ बंधन कर्म ।
काम क्रोध हत्या पर-नास,
सुपनामाहीं नरक-निवास ।

आदि भवानी संकर देवा,
यह सब सुपना देवा-लेवा।
ब्रह्मा बिस्नू दस औतार,
सुपना-अंतर सब ब्यौहार।
उद्भिज सेदज जेरज अंडा,
सुपन रूप बरतै ब्रह्मंडा।
उपजै बरतै अरु बिनसावै,
सुपने-अंतर सब दरसावै।
त्याग ग्रहन सुपना-ब्यौहारा,
जो जागा सो सबसे न्यारा।
जो कोइ साध जागिया चावै,
सो सतगुरुके सरनै आवै।
कृत-कृत बिरला-जोग सभागी,
गुरुमुख चेत सब्द-मुख जागी।
संसय मोह भरम निसि-नास,
आतमराम सहज परकास।

राम सँभाल सहज धर ध्यान,
पाछे सहज प्रकासै ज्ञान ।
जन 'दरियाव' सोइ बड़भागी,
जाकी सुरत ब्रह्म-सँग लागी ॥

(९)

आदि अनादी मेरा साँई ।
दृष्ट न मुष्ट है, अगम, अगोचर,
यह सब माया उनहीं माँई ।
जो बनमाली सींचै मूल,
सहजै पिवै डाल फल फूल ।
जो नरपतिको गिरह बुलावै,
सेना सकल सहज ही आवै ।
जो कोई कर भानु प्रकासै,
तौ निसि तारा सहजहि नासै ।
गरुड़-पंख जो घरमें लावै,
सर्प जाति रहने नहिं पावै ।

'दरिया' सुमिरै एकहि राम,
एक राम सारै सब काम ॥

(१०)

जो सुमिरूँ तौ पूरन राम ।
अगम अपार, पार नहिं जाको,
है सब संतनका बिसराम ।
कोटि बिस्नु जाके अगवानी,
संख चक्र सत सारँगपानी ।
कोटि कारकुन बिधि कर्मधार,
परजापति मुनि बहु बिस्तार ।
कोटि काल संकर कोतवाल,
भैरव दुर्गा धरम बिचार ।
अनंत संत ठाढ़े दरबार,
आठ सिधि नौ निधि द्वारपाल ।
कोटि बेद जाको जस गावैं,
बिद्या कोटि जाको पार न पावैं ।

कोटि अकास जाके भवन दुवारे,
पवन कोटि जाके चँवर डुरावै ।
कोटि तेज जाके तपै रसोय,
बरुन कोटि जाके नीर समोय ।
पृथी कोटि फुलवारी गंध,
सुरत कोटि जाके लाया बंध ।
चंद सूर जाके कोटि चिराग,
लछमी कोटि जाके राँधैं पाग ।
अनंत संत और खिलवत खाना,
लख-चौरासी पलै दिवाना ।
कोटि पाप काँपैं बल-छीन,
कोटि धरम आगे आधीन ।
सागर कोटि जाके कलसधार,
छपन कोटि जाके पनिहार ।
कोटि सन्तोष जाके भरा भंडार,
कोटि कुबेर जाके मायाधार ।

कोटि स्वर्ग जाके सुखरूप,
कोटि नर्क जाके अन्धकूप ।
कोटि करम जाके उत्पतिकार,
किला कोटि बरतावनहार ।
आदि अन्त मद्ध नहिं जाको,
कोई पार न पावै ताको ।
जन दरियाका साहब सोई,
तापर और न दूजा कोई ॥

(११)

चल-चल रे हंसा, राम-सिन्ध,
बागड़में क्या तू रह्यो बन्ध ।
जहँ निर्जल धरती, बहुत धूर,
जहँ साकित बस्ती दूर-दूर ।
ग्रीषम ऋतुमें तपै भोम,
जहँ आतम दुखिया रोम-रोम ।

भूख-प्यास दुख सहै आन,
जहँ मुक्ताहल नहिं खान-पान ।
जउवा नारू दुखित रोग,
जहँ मैं-तैं बानी हरष-सोग ।
माया बागड़ बरनी येह,
अब राम-सिन्ध बरनूँ सुन लेह ।
अगम अगोचर कथ्या न जाय,
अब अनुभवमाहीं कहूँ सुनाय ।
अगम पन्थ है राम-नाम,
गिरह बसौ जाय परमधाम ।
मानसरोवर बिमल नीर,
जहँ हंस-समागम तीर-तीर ।
जहँ मुक्ताहल बहु खान-पान,
जहँ अवगत तीरथ नित सनान ।
पाप-पुन्यकी नहीं छोत,
जहँ गुरु-सिष-मेला सहज होत ।

गुन इन्द्री मन रहे थाक,
जहँ पहुँच न सकते बेद-बाक ।
अगम देस जहँ अभयराय,
जन दरिया, सुरत अकेली जाय ॥

(१२)

चल-चल रे सुआ, तेरे आदराज,
पिंजरामें बैठा कौन काज ?
बिल्लीका दुख दहै जोर,
मारै पिंजरा तोर-तोर ।
मरने पहले मरो धीर,
जो पाछे मुक्ता सहज छीर ।
सतगुरु-सब्द हृदैमें धार,
सहजाँ-सहजाँ करो उचार ।
प्रेम-प्रवाह धसै जब आभ,
नाद प्रकासै परम लाभ ।

फिर गिरह बसाओ गगन जाय,
जहँ बिल्ली मृत्यु न पहुँचै आय।
आम फले जहँ रस अनन्त,
जहँ सुखमें पाओ परम तन्त।
झिरमिर-झिरमिर बरसै नूर,
बिन कर बाजै तालतूर।
जन दरिया आनन्द पूर,
जहँ बिरला पहुँचै भाग भूर॥

(१३)

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै।
साध-संग और राम-भजन बिन,
काल निरन्तर लूटै॥
मलसेती जो मलको धोवै,
सो मल कैसे छूटै।
प्रेमका साबुन नामका पानी,
दोय मिल ताँता टूटै॥

भेद-अभेद भरमका भाँड़ा,
चौड़े पड़-पड़ फूटै।
गुरुमुख-सब्द गहै उर-अन्तर,
सकल भरमसे छूटै॥
रामका ध्यान तू धर रे प्रानी,
अमरतका मेंह बूटै।
जन दरियाव, अरप दे आपा,
जरा-मरन तब टूटै॥

(१४)

दुनियाँ भरम भूल बौराई;
आतमराम सकल घट भीतर,
जाकी सुद्ध न पाई।
मथुरा कासी जाय द्वारिका,
अरसठ तीरथ न्हावै;
सतगुरु बिन सोधा नहिं कोई,
फिर-फिर गोता खावै।

चेतन मूरत जड़को सेवै,
बड़ा थूल मत गैला ;
देह-अचार किया कहा होई,
भीतर है मन मैला ।
जप-तप-संजम काया-कसनी,
सांख्य जोग ब्रत दाना ;
यातें नहीं ब्रह्मसे मेला,
गुनहर करम बँधाना ।
बकता है है कथा सुनावै,
स्रोता सुन घर आवै ;
ज्ञान-ध्यानकी समझ न कोई,
कह-सुन जनम गँवावै ।
जन दरिया, यह बड़ा अचंभा,
कहे न समझै कोई ;
भेड़-पूँछ गहि सागर लाँघै,
निश्चय डूबै सोई ॥

(१५)

मैं तोहि कैसे बिसरूँ देवा !

ब्रह्मा बिस्नु महेसुर ईसा,

ते भी बंछैं सेवा ।

सेस सहस मुख निसिदिन ध्यावै,

आतम ब्रह्म न पावै ;

चाँद सूर तेरी आरति गावैं,

हिरदय भक्ति न आवै ।

अनन्त जीव तेरी करत भावना,

भरमत बिकल अयाना ;

गुरु-परताप अखंड लौ लागी,

सो तोहि माहि समाना ।

बैकुंठ आदि सो अङ्ग मायाका,

नरक अन्त अँग माया ;

पारब्रह्म सो तो अगम अगोचर,

कोइ बिरला अलख लखाया ।

जन दरिया, यह अकथ कथा है,
अकथ कहा क्या जाई ;
पंछीका खोज, मीनका मारग,
घट-घट रहा समाई ॥

(१६)

जीव बटाऊ रे बहता मारग माहीं ;
आठ पहरका चालना,
घड़ी इक ठहरै नाहीं ।
गरभ जनम बालक भयो रे,
तरुनाई गरबान ;
बृद्ध मृतक फिर गर्भ-बसेरा,
यह मारग परमान ।
पाप-पुन्य सुख-दुःखकी करनी,
बेड़ी थारे लागी पाँय ;
पञ्च ठगोंके बसमें पड़ो रे,
कब घर पहुँचै जाय ।

चौरासी बासो न बस्यो रे,
अपना कर-कर जान ;
निस्चय निस्चल होयगो रे तू,
पद पहुँचै निर्बान।
राम बिना तोको ठौर नहीं रे,
जहँ जावै तहँ काल ;
जन दरिया मन उलट जगतसूँ,
अपना राम सँभाल॥

(१७)

है कोइ सन्त राम अनुरागी,
जाकी सुरत साहबसे लागी ?
अरस-परस पिवके सँग राती,
होय रही पतिब्रता ;
दुनियाँ भाव कछु नहिं समझै,
ज्यों समुँद समानी सरिता।

मीन जाय करि समुँद समानी
जहँ देखै तहँ पानी ;
काल कीरका जाल न पहुँचै,
निर्भय ठौर लुभानी ।
बावन चन्दन भौंरा पहुँचा,
जहँ बैठै तहँ गन्धा ;
उड़ना छोड़के थिर है बैठा,
निसिदिन करत अनन्दा ।
जन दरिया, इक राम-भजन कर,
भरम-वासना खोई ;
पारस परसि भया लोह कंचन,
बहुरि न लोहा होई ॥

(१८)

मुरली कौन बजावै हो,
गगन-मँडलके बीच ?

त्रिकुटी-संगम होयकर,
गंग-जमुनके घाट ;
या मुरलीके शब्दसे,
सहज रचा बैराट ।
गंग-जमुन-बिच मुरली बाजै,
उत्तर दिसि धुन होहि ;
वा मुरलीकी टेरहिं सुन-सुन,
रहीं गोपिका मोहि ।
जहँ अधर डाली हंसा बैठा,
चूगत मुक्ता हीर ;
आनँद चकवा केल करत है,
मानसरोवर-तीर ।
सब्द धुन मिरदंग बजत है,
बारह मास बसन्त ;
अनहद ध्यान अखंड आतुर वे,
धारत सब ही सन्त ।

कान्ह गोपी करत नृत्यहिं,
चरन बपु हि बिना ;
नैन बिन 'दरियाव' देखै,
आनँदरूप घना ॥

(१६)

ऐसा साधू करम दहै ।
अपना राम कबहुँ नहिं बिसरै,
बुरी-भली सब सीस सहै ।
हस्ती चलै भूकै बहु कूकर,
ताका औगुन उर न गहै ;
वाकी कबहूँ मन नहिं आनै,
निराकारकी ओट रहै ।
धनको पाय भया धनवन्ता,
निरधन मिल उन बुरा कहै ;
वाकी कबहुँ न मनमें लावै,
अपने धन सँग जाय रहै ।

पतिको पाय भई पतिब्रता,
बहु बिभचारिन हाँसि करै ;
वाके सङ्ग कबहुँ नहिं जावे,
पतिसे मिलकर चिता जरै ।
'दरिया' राम भजै सो साधू,
जगत भेष उपहास करै ;
वाको दोष न अन्तर आनै,
चढ़ नाम-जहाज भव-सिन्धु तरै ।

(२०)

साहब मेरे राम हैं, मैं उनकी दासी;
जो बान्या सो बन रह्या, आज्ञा अबिनासी ।
अरध-उरध पट कँवल बिच, करतार छिपाया ;
सतगुरु मिल किरपा करी, कोइ बिरले पाया ।
तीन लोक, चौदह भुवन, केवल वह भरपूरा ;
हाजिराँसे हाजिर सदा, वह दूराँसे दूरा ।

पाप-पुन्य दोउ रूप हैं, उनहींकी माया ;
साधनके बरतन सदा, भरमै भरमाया ।
जन दरिया, इक राम भज, भजबेकी बारा ;
जिन यह भार उठाइया, उनके सिर भारा ॥

(२१)

अमृत नीका कहै सब कोई,
पीये बिना अमर नहिं होई ।
कोइ कहै, अमृत बसै पताल,
नर्क अन्त नित ग्रासै काल ।
कोइ कहै, अमृत समुन्दर माहीं,
बड़वा अगिन क्यों सोखत ताही ?
कोइ कहै, अमृत ससिमें बास,
घटै-बढ़ै क्यों होइहै नास ?
कोइ कहै, अमृत सुरगाँ माहिं,
देव पियें क्यों खिर-खिर जाहिं ?

सब अमृत बातोंका बात,
अमृत है सन्तनके साथ ।
'दरिया' अमृत नाम अनंत,
जाको पी-पी अमर भये सन्त ॥

(२२)

साधो, अलख निरंजन सोई ॥
गुरु-परताप राम-रस निर्मल,
और न दूजा कोई ।
सकल ज्ञानपर ज्ञान दयानिधि,
सकल जोतिपर जोती ।
जाके ध्यान सहज अघ नासै,
सहज मिटै जम छोती ।
जाकी कथाके सरवनतेंही,
सरवन जागत होई ।
ब्रह्मा-बिस्नु-महेस अरु दुर्गा,
पार न पावै कोई ।

सुमिर-सुमिर जन होइहैं राना,
अति झीना-से-झीना ।
अजर, अमर, अच्छय अबिनासी,
महा बीन परबीना ।
अनंत संत जाके आस-पियासा,
अगन मगन चिर जीवैं ।
जन दरिया, दासनके दासा,
महाकृपा-रस पीवैं ॥

(२३)

राम-नाम नहिं हिरदै धरा,
जैसा पसुवा तैसा नरा ।
पसुवा-नर उद्यम कर खावै,
पसुवा तो जंगल चर आवै ।
पसुवा आवै, पसुवा जाय,
पसुवा चरै औ पसुवा खाय ।

राम-नाम ध्याया नहिं माईं,
जनम गया पसुवाकी नाईं ।
रामनामसे नाही प्रीत,
यह सब ही पसुवोंकी रीत ।
जीवत सुख-दुखमें दिन भरें,
मुवा पछे चौरासी परै ।
जन दरिया, जिन राम न ध्याया,
पसुवा ही ज्यों जनम गँवाया ॥

(२४)

साधो, हरि-पद कठिन कहानी ।
काजी पण्डित मरम न जानैं,
कोइ-कोइ बिरला जानी ।
अलहको लहना, अगहको गहना,
अजरको जरना, बिन मौत मरना ।
अधरको धरना, अलखको लखना,
नैन बिन देखना, बिन पानी घट भरना ।

अमिलसूँ मिलना, पाँव बिन चलना,
बिन अगिनके दहना, तीरथ बिन न्हावना।
पन्थ बिन जावना, बस्तु बिन पावना,
बिन गेहके रहना, बिना मुख गावना।
रूप न रेख, बेद नहिं सिमृति,
नहिं जाति बरन कुल-काना।
जन दरिया, गुरुगमतें पाया,
निरभय पद निरबाना॥

(२५)

साधो, राम अनूपम बानी।
पूरा मिला तो वह पद पाया,
मिट गई खैंचातानी।
मूल चाँप दृढ़ आसन बैठा,
ध्यान धनीसे लाया।
उलटा नाद कँवलके मारग,
गगना माहिं समाया।

गुरुके सब्दकी कुंजी सेती,
अनंत कोठरी खोली।
ध्रूके लोकपै कलस बिराजै,
ररंकार धुन बोली।
बसत अगाध अगम सुख-सागर,
देख सुरत बौराई।
बस्तु घनी, पर बरतन ओछा,
उलट अपूठी आई।
सुरत सब्द मिल परचा हूआ,
मेरु मद्धका पाया।
तामें पैस गगनमें आया,
जायके अलख लखाया।
पग बिन पातुर, कर बिन बाजा,
बिन मुख गावैं नारी।
बिन बादल जहँ मेहा बरसै,
ढुमक-ढुमक सुख-क्यारी।

जन दरियाव, प्रेम-गुन गाया,
वहँ मेरा अरट चलाया।
मेरुदंड होय नाल चली है,
गगन-बाग जहँ पाया ॥

(२६)

राम भरोसा राखिये, ऊनित नहिं काई।
पूरनहारा पूरसी, कलपै मत भाई!
जल दिखै आकाससे, कहो कहाँसे आवै?
बिन जतना ही चहुँ दिसा, दह चाल चलावै।
चात्रिक भू-जल ना पिवै, बिन अहार न जीवै।
हर वाहीको पूरवै, अन्तरगत पीवै।
राजहंस मुकता चुगै, कछु गाँठ न बाँधै,
ताको साहब देत है, अपनो ब्रत साधै।
गरभ-बासमें जाय करि, जिव उद्यम न करही;
जानराय जानै सबै, उनको वहिं भरही।

तीन लोक चौदह भुवन, करै सहज प्रकासा ।
जाके सिर समरथ धनी, सोचै क्या दासा ?
जबसे यह बाना बना, सब समझ बनाई ,
'दरिया' बिकलप मेटिकै, भज राम सहाई ॥

(२७)

सतगुरुसे सब्द ले, रसना रटन कर,
हिरदेमें आनकर ध्यान लावै ।
घट-कँवल बेधकर, नाभि-कँवल छेदकर,
कामको लोप पाताल जावै ।
जहँ साँईको सीस ले, जमके सिर पाँव दे,
मेरु मध होय आकास आवै ।
अगम है बाग जहँ, निगम गुल खिल रहा,
दास दरियाव, दीदार पावै ॥

ताज

(१)

छैल जो छबीला, सब रंगमें रँगीला, बड़ा,
चित्तका अड़ीला, कहूँ देवतोंसे न्यारा है ।
माल गले सोहै, नाक-मोती सेत जोहै, कान
कुंडल मन मोहै, लाल मुकुट सिर धारा है ।
दुष्ट जन मारे, सब सन्त जो उबारे 'ताज'
चित्तमें निहारे प्रन-प्रीति करनवारा है ।
नन्दजूका प्यारा, जिन कंसको पछारा, वह,
वृन्दावनवारा, कृष्ण साहब हमारा है ॥

(२)

ध्रुवसे, प्रह्लाद, गज, ग्राहसे अहिल्या देखि
सौरी और गीध यों विभीषन जिन तारे हैं ।
पापी अजामील, सूर, तुलसी, रैदास कहूँ ,
नानक, मलूक, 'ताज' हरिहीके प्यारे हैं ॥

धनी, नामदेव, दादू, सदना कसाई जानि,
गनिका, कबीर, मीरा, सेन उर धारे हैं ।
जगतकौ जीवन जहान बीच नाम सुन्यौ,
राधाके वल्लभ कृष्ण वल्लभ हमारे हैं ॥

(३)

कोऊ जन सेवैं शाह राजा राव ठाकुरकों,
कोऊ जन सेवैं भैरों भूप काजसार हैं ।
कोऊ जन सेवैं देवी चंडिका प्रचंडीहीकों,
कोऊ जन सेवैं 'ताज' गनपति सिरभार हैं ॥
कोऊ जन सेवैं प्रेत-भूत भवसागरकों,
कोऊ जन सेवैं जग कहूँ बार-बार हैं ।
काहूके ईस विधि संकरको नेम बड़ो,
मेरे तो अधार एक नन्दके कुमार हैं ॥

(४)

साहब सिरताज हुआ नन्दजूका आप पूत,
मार जिन असुर करी काली-सिर छाप है ।

कुन्दनपुर जायकैं सहाय करी भीषमकी,
रुकमिनीकी टेक राखी लगी नहिं खाप है ॥
पांडवकी पच्छ करी द्रौपदी बढ़ाय चीर,
दीन-से सुदामाकी मेटी जिन ताप है ।
निहचै करि सोधि लेहु ज्ञानी-गुनवान बेगि,
जगमें अनूप मित्र कृष्णका मिलाप है ॥

(५)

सुनो दिलजानी मेरे दिलकी कहानी तुम,
दस्त ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं ।
देवपूजा ठानी मैं निवाजहू भुलानी, तजे
कलमा-कुरान साड़े गुननि गहूँगी मैं ॥
साँवला सलोना सिरताज सिर कुल्ले दिये,
तेरे नेह दागमें निदाघ ह्वै दहूँगी मैं ।
नंदके कुमार, कुरबान तेरी सूरतपै,
हौं तौ मुगलानी हिंदुवानी ह्वै रहूँगी मैं ॥

शेख

(१)

मिटि गयो मौन, पौन-साधनकी सुधि गई,
भूली जोग-जुगति, बिसार्यो तप बनकौ ।
'शेख' प्यारे मनकौ उज्यारो भयो प्रेम नेम,
तिमिर अज्ञान गुन नास्यो बालपनकौ ॥
चरनकमलहीकी लोचनमें लोच धरी,
रोचन ह्वै राच्यो, सोच मिट्यो धाम-धनकौ ।
सोक लेस नेकहूँ, कलेसकौ न लेस रह्यो,
सुमरि श्रीगोकलेस गो कलेस मनकौ ॥

नज़ीर

(१)

यारो, सुनो य दधिके लुटैयाका बालपन ,
औ मधुपुरी नगरके बसैयाका बालपन ।
मोहनसरूप नृत्य-करैयाका बालपन ,
बन-बनके ग्वाल गौवैं चरैयाका बालपन ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(२)

ज़ाहिरमें सुत वो नंद जसोदाके आप थे ,
वरना वो आपी माई थे और आपी बाप थे ।
परदेमें बालपनके ये उनके मिलाप थे ,
जोती-सरूप कहिए जिन्हें सो वो आप थे ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(३)

उनको तो बालपनसे न था काम कुछ ज़रा,
संसारकी जो रीत थी उसको रखा बजा।
मालिक थे वह तो आपी, उन्हें बालपनसे क्या ?
वाँ बालपन, जवानी, बुढ़ापा सब एक था।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(४)

बाले थे बिर्जराज, जो दुनियाँमें आ गये,
लीलाके लाख रंग तमाशे दिखा गये।
इस बालपनके रूपमें कितनोंको भा गये,
एक यह भी लहर थी जो जहाँको जता गये।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(५)

परदा न बालपनका वो करते अगर ज़रा,
क्या ताब थी जो कोई नज़र भरके देखता।

झाड़ औ पहाड़ देते सभी अपना सर झुका,
पर कौन जानता था जो कुछ उनका भेद था।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(६)

अब घुटनियोंका उनके मैं चलना बयाँ करूँ ?
या मीठी बातें मुँहसे निकलना बयाँ करूँ ?
या बालकोंमें इस तरह पलना बयाँ करूँ ?
या गोदियोंमें उनका मचलना बयाँ करूँ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(७)

पाटी पकड़के चलने लगे जब मदनगोपाल,
धरती तमाम हो गई एक आनमें निहाल।
बासुकि चरन छुअनको चले छोड़के पताल,
आकासपर भी धूम मची देख उनकी चाल।

ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(८)

करने लगे य धूम जो गिरधारी नंदलाल,
इक आप और दूसरे साथ उनके ग्वाल-बाल।
माखन दही चुराने लगे, सबके देख भाल,
दी अपने दूध-चोरीकी घर घरमें धूम डाल।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(९)

कोठेमें होवे फिर तो उसीको ढँढोरना,
मटका हो तो उसीमें भी जा मुखको बोरना।
ऊँचा हो तो भी कंधेपे चढ़के न छोड़ना,
पहुँचा न हाथ तो उसे मुरलीसे फोड़ना।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन

(१०)

गर चोरी करते आ गई ग्वालिन कोई वहाँ,
औ उसने आ पकड़ लिया तो उससे बोले वाँ।
मैं तो तेरे दहीकी उड़ाता था मक्खियाँ,
खाता नहीं मैं उसको, निकाले था चींटियाँ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(११)

गुस्सेमें कोई हाथ पकड़ती जो आनकर,
तो उसको वह स्वरूप दिखाते थे मुर्लीधर।
जो आपी लाके धरती वो माखन कटोरीभर,
गुस्सा वो उसका आनमें जाता वहाँ उतर।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१२)

उनको तो देख ग्वालिनें जो जान पाती थीं,
घरमें इसी बहानेसे उनको बुलाती थीं।

जाहिरमें उनके हाथसे वे गुल मचाती थीं ,
परदे सबी वो कृष्णकी बलिहारी जाती थीं ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१३)

कहती थीं दिलमें, दूध जो अब हम छिपायँगे ,
श्रीकृष्ण इसी बहाने हमें मुँह दिखायँगे ।
और जो हमारे घरमें ये माखन न पायँगे ,
तो उनको क्या गरज है वो काहेको आयँगे ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१४)

सब मिल जसोदा पास यह कहती थीं आके, बीर ,
अब तो तुम्हारा कान्हा हुआ है बड़ा सरीर ।
देता है हमको गालियाँ, औ फाड़ता है चीर ,
छोड़े दही न दूध, न माखन मही न खीर ।

ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१५)

माता जसोदा उनकी बहुत करतीं मिंतियाँ,
औ कान्हको डरातीं उठा मनकी साँटियाँ।
तब कान्हजी जसोदासे करते यही बयाँ,
तुम सच न मानो मैया ये सारी हैं झूठियाँ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१६)

माता, कभी ये मुझको पकड़कर ले जाती हैं,
औ गाने अपने साथ मुझे भी गवाती हैं।
सब नाचती हैं आप मुझे भी नचाती हैं,
आपी तुम्हारे पास ये फ़रियादी आती हैं।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१७)

मैया, कभी ये मेरी छगुलिया छिपाती हैं,
जाता हूँ राहमें तो मुझे छेड़े जाती हैं।
आपी मुझे रुठाती हैं आपी मनाती हैं,
मारो इन्हें ये मुझको बहुत-सा सताती हैं।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१८)

इक रोज़ मुँहमें कान्हने माखन छिपा लिया,
पूछा जसोदाने तो वहाँ मुँह बना दिया।
मुँह खोल तीन लोकका आलम दिखा दिया,
इक आनमें दिखा दिया औ फिर भुला दिया।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१९)

थे कान्हजी तो नंद-जसोदाके घरके माह,
मोहन नवलकिसोरकी थी सबके दिलमें चाह।

उनको जो देखता था, सो करता था वाह वाह ,
ऐसा तो बालपन न किसीका हुआ है आह ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(२०)

राधारमनके यारो अजब जाये गौर थे ,
लड़कोंमें वो कहाँ है जो कुछ उनमें तौर थे ।
आपी वो प्रभु नाथ थे, आपी वो दौर थे ,
उनके तो बालपनहीमें तेवर कुछ और थे ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(२१)

होता है यों तो बालपन हर तिफ़्लका भला ,
पर उनके बालपनमें तो कुछ औरी भेद था ।
इस भेदकी भला जी किसीको खबर है क्या ?
क्या जाने अपनी खेलने आये थे क्या कला ।

ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(२२)

सब मिलके यारो, कृष्णमुरारीकी बोलो जै ,
गोविंद-कुंज-छैल-बिहारीकी बोलो जै ।
दधिचोर गोपीनाथ, बिहारीकी बोलो जै ,
तुम भी 'नज़ीर' कृष्णमुरारीकी 'बोलो जै ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन ,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन ॥

(१)

जब मुरलीधरने मुरलीको अपने अधर धरी ,
क्या-क्या परेम-प्रीत-भरी उसमें धुन भरी ।
लै उसमें 'राधे-राधे' की हरदम भरी खरी ,
लहराई धुन जो उसकी इधर औ उधर ज़री ।
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी ,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी ॥

(२)

ग्वालोंमें नंदलाल बजाते वो जिस घड़ी,
गौएँ धुन उसकी सुननेको रह जातीं सब खड़ी।
गलियोंमें जब बजाते तो वह उसकी धुन बड़ी,
ले-लेके अपनी लहर जहाँ कानमें पड़ी।
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी॥

(३)

मोहनकी बाँसुरीके मैं क्या-क्या कहूँ जतन,
ले उसकी मनकी मोहिनी धुन उसकी चितहरन।
उस बाँसुरीका आनके जिस जा हुआ बजन,
क्या जल, पवन, 'नज़ीर' पखेरू व क्या हरन–
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी॥

(१)

है आशिक़ और माशूक जहाँ
वाँ शाह वज़ीरी है बाबा!

नै रोना है, नै धोना है,
नै दर्दे असीरी है बाबा !
दिन-रात बहारें-चुहलें हैं,
औ ऐश सफ़ीरी है बाबा !
जो आशिक़ हुए सो जानै हैं,
यह भेद फ़क़ीरी है बाबा !
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा !
जब आशिक मस्त फ़क़ीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा !

(२)

कुछ जुल्म नहीं, कुछ जोर नहीं,
कुछ दाद नहीं फ़रियाद नहीं ।
कुछ क़ैद नहीं, कुछ बंद नहीं,
कुछ जब्र नहीं, आज़ाद नहीं ।
शागिर्द नहीं, उस्ताद नहीं,
वीरान नहीं, आबाद नहीं ।

हैं जितनी बातें दुनियाँकी,
सब भूल गये, कुछ याद नहीं।
हर आन हँसी हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक़ मस्त फ़क़ीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(२)

जिस सिम्त नज़रकर देखे हैं,
उस दिलवरकी फुलवारी है।
कहीं सब्ज़ीकी हरियाली है,
कहीं फूलोंकी गुलक्यारी है।
दिन-रात मगन खुश बैठे हैं,
और आस उसीकी भारी है।
बस, आप ही वो दातारी है,
और आप ही वो भंडारी है।
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!

जब आशिक़ मस्त फ़क़ीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा !

(४)

हम चाकर जिसके हुस्नके हैं,
वह दिलबर सबसे आला है ।
उसने ही हमको जी बख़्शा,
उसने ही हमको पाला है ।
दिल अपना भोला-भाला है,
और इश्क़ बड़ा मतवाला है ।
क्या कहिए और 'नज़ीर' आगे,
अब कौन समझनेवाला है ?
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा !
जब आशिक़ मस्त फ़क़ीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा !

(१)

क्या इल्म उन्होंने सीख लिये,
जो बिन लेखेको बाँचे हैं।
और बात नहीं मुँहसे निकले,
बिन होंठ हिलाये जाँचे हैं।
दिल उनके तार सितारोंके,
तन उनके तबल तमाँचे हैं।
मुँहचंग जबाँ दिल सारंगी,
पा घुँघरू हाथ कमाँचे हैं।
हैं राग उन्हींके रंग-भरे,
औ भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(२)

जब हाथको धोया हाथोंसे,
जब हाथ लगे थिरकानेको।

और पाँवको खींचा पाँवोंसे,
और पाँव लगे गत पानेको ।
जब आँख उठाई हस्तीसे,
जब नयन लगे मटकानेको ।
सब काछ कछे, सब नाच नचे,
उस रसिया छैल रिझानेको ।
हैं राग उन्हींके रंग-भरे,
औ भाव उन्हींके साँचे हैं ।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं ॥

(३)

था जिसकी खातिर नाच किया,
जब मूरत उसकी आय गई ।
कहीं आप कहा, कहीं नाच कहा,
और तान कहीं लहराय गई ।

जब छैल-छबीले सुंदरकी,
छबि नैनों भीतर छाय गई ।
एक मुरछा-गति-सी आय गई,
और जोतमें जोत समाय गई ।
हैं राग उन्हींके रंग-भरे,
औ भाव उन्हींके साँचे हैं ।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं ॥

(४)

सब होश बदनका दूर हुआ,
जब गतपर आ मिरदंग बजी ।
तन भंग हुआ, दिल दंग हुआ,
सब आन गई बेआन सजी ।
यह नाचा कौन 'नज़ीर' अब याँ,
और किसने देखा नाच अजी !

जब बूँद मिली जा दरियामें,
इस तानका आख़िर निकला जी।
हैं राग उन्हींके रंग-भरे,
औ भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(१)

गर यारकी मर्ज़ी हुई सर जोड़के बैठे।
घर-बार छुड़ाया तो वहीं छोड़के बैठे॥
मोड़ा उन्हें जिधर वहीं मुँह मोड़के बैठे।
गुदड़ी जो सिलाई तो वहीं ओढ़के बैठे॥
औ शाल उढ़ाई तो उसी शालमें ख़ुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें ख़ुश हैं॥

(२)

गर खाट बिछानेको मिली खाटमें सोये ।
दूकाँमें सुलाया तो वो जा हाटमें सोये ॥
रस्तेमें कहा सो तो वह जा बाटमें सोये ।
गर टाट बिछानेको दिया टाटमें सोये ॥
औ खाल बिछा दी तो उसी खालमें खुश हैं ।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं ॥

(३)

उनके तो जहाँमें अजब आलम हैं नज़ीर आह !
अब ऐसे तो दुनियामें वली कम हैं नज़ीर आह !
क्या जाने, फरिश्ते हैं कि आदम हैं नज़ीर आह !
हर वक्तमें हर आनमें खुर्रम हैं नज़ीर आह !
जिस ढालमें रक्खा वो उसी ढालमें खुश हैं ।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं ॥

(१)

है बहारे बाग़ दुनिया चंदरोज़,
देख लो इसका तमाशा चंदरोज़ ।
ऐ मुसाफिर कूचका सामान कर,
इस जहाँमें है बसेरा चंदरोज़ ।
पूछा लुकमांसे जिया तू कितने रोज़ ?
दस्त हसरत मलके बोला, चंदरोज़ ।
बाद मदफ़न क़ब्रमें बोली कज़ा—
अब यहाँपै सोते रहना चंदरोज़ !
फिर तुम कहाँ, औ मैं कहाँ, ऐ दोस्तो !
साथ है मेरा तुम्हारा चंदरोज़ ।
क्या सताते हो दिले बेजुर्मको,
ज़ालिमो, है ये ज़माना चंदरोज़ ।
याद कर तू ऐ नज़ीर ! क़बरोंके रोज़,
ज़िंदगीका है भरोसा चंदरोज़ ॥
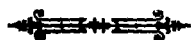
कारे खाँ

(१)

माफ़ किया मुलक, मताह दी बिभीषनको ,
कही थी जुबान कुरबान ये करारकी ।
बैठनेको ताइफ़ तखत दै तखत दिया ,
दौलत बढ़ाई थी जुनारदार यारकी ॥
तब क्या कहा था अब सरफ़राज आप हुए ,
जब कि अरज सुनी चिड़ीमार खारकी ।
'कारे' के करारमाहिं क्यों न दिलदार हुए ,
एरे नंदलाल ! क्यों हमारी बार, बार की ?

(२)

छलबलकै थाक्यो अनेक गजराज भारी ,
भयो बलहीन जब नेक न छुड़ा गयो ।
कहिबेको भयो करुना की, कवि 'कारे' कहैं ,
रही नेक नाक और सब ही डुबा गयो ॥

पंकज-से पायन पयाद पलंग छाँडि,
पावरी बिसारि प्रभु ऐसी परि पा गयो।
हाथीके हृदयमाहिं आधो 'हरि' नाम सोय,
गरे जौ न आयो गरुड़ेस तौलों आ गयो॥

(३)

वृन्दावन कीरति बिनोद कुंज-कुंजनमें,
आनँदके कंद लाल मूरति गुपालकी।
कालीदह 'कारे' पताल पैठि नाग नाथ्यो,
केतकीके फूल तोरि लाये माला हारकी॥
परसतहीं पूतना परमगति पाय गई,
पलकहीं पार पार्‍यो अजामील नारकी।
गीध-गुन-गानहार, छाँछके उगानहार!
आई ना अहीर! क्या हमारी बार, बार की॥

करीमबख्श

(१)

ऐ मेरे रब ! तू पाप-हरैया,
संकटमें किरपाका करैया ।
मेरे रहीम ! रहम कर साहब !
मेरे करीम ! करम कर साहब !
मुझ पापीका पाप छुड़ाओ,
डूबत नैया पार लगाओ ।
झाँझरि नाव, पतवार पुराना,
यह डर मोरे हिये समाना ।
जो तुम सुध नहिं लैहौ मोरी,
बैरि माँझ मोहि दैहै बोरी ।
दियो बैरि इक संग लगाये,
जो सीधे पथसों बहकाये ।
देत दोहाई हौं अब तोरी,
होहु सहाय बिपतमें मोरी ।

ऐसी जून बियापी मोपर,
कठिन काज छोड़ा है तोपर।
आपन न्याव तुम्हींपर छाँड़ा,
लाद चलेगा जब बंजाड़ा।
यह सब कुछ, पर आश है हमकू,
हिय पूरन बिस्वास है हमकू।
हमरी करनी सब बिसराई,
दैहौ बिगड़ो काज बनाई।
देत तुम्हीं औ दिलावत तुमहीं,
मारो तुम्हीं औ जिलावो तुमहीं।
सब कुछ तज 'करीम' हौं तोको,
ध्यावौं, होय न जासों धोको॥

(२)

कैसे तुम आ नैहरवा भुलानी?
सइयाँका कहना कबहुँ नहिं मानी।

काम कियो नित निज-मन-मानी

पियाकी सुध काहे बिसरानी ?

टेढ़ी चाल अजहुँ तज मूरख,

चार दिनाकी यह जिंदगानी।

मद्-माती इठलात फिरति का,

गोरी, का तेरे हियमें समानी ?

गुन-ढँगसों जो पियाको रिझावै,

'करीम' वही है सखी सयानी॥

(३)

ना जानों, पियासों कैसे होयँ बतियाँ !

उनके मनकी जुगति नहिं सीखी,

यह जिय सोच रहै दिन-रतियाँ॥

वहाँ न कोऊको कोऊ पूछत,

सुन-सुन हाल फटति हैं छतियाँ।

और सखी पिया अपने मिलनकी

करति 'करीम' हैं लाखन बतियाँ॥

इन्शा

(१)

जब छाँड़ि करीलकी कुंजनकों,
वहाँ द्वारकामें हरि जाय छये।
कलधौतके धाम बनाय बने,
महराजनके महराज भये॥
तज मोरके पंख औ कामरिया,
कछु औरहि नाते हैं जोड़ लये।
धरि रूप नये किये नेह नये,
अब गइयाँ चराइबो भूल गये॥

बाज़िन्द

(१)

सुन्दर पाई देह नेह कर राम सों,
क्या लुब्धा बेकाम धरा धन धाम सों ?
आतम-रंग-पतंग, संग नहीं आवसी,
जमहूके दरबार, मार बहु खावसी ।

(२)

गाफ़िल मूढ़ गँवार अचेतन चेत रे !
समझै संत सुजान, सिखावन देत रे !
बिषया माँहि बिहाल लगा दिन रैन रे !
सिर बैरी जमराज, न सूझै नैन रे !

(३)

दिलके अन्दर देख, कि तेरा कौन है,
चलै न भोले ! साथ, अकेला गौन है ।
देख देह धन दार इनूँसे चित दिया,
रच्या न निसिदिन राम काम तैं क्या किया ?

(४)

देह गेहमें नेह निवारे दीजिए,
राजी जासें राम, काम सोइ कीजिए ।
रह्या न बेसी कोय रंक अरु राव रे !
कर ले अपना काज, बन्या हद दाव रे ! ।

(५)

बंछत ईस गनेस एइ नर-देहको,
श्रीपति-चरण-सरोज बढ़ावन नेहको ।
सो नर-देही पाय अकाज न खोइए,
साँईके दरबार गुनाही होइए ।

(६)

केती तेरी जान, किता तेरा जीवना ?
जैसा स्वपन-विलास, तृषा जल पीवना ।
ऐसे सुखके काज, अकाज कमावना,
बार-बार जम-द्वार मार बहु खावना ।

(७)

नहिं है तेरा कोय, नहीं तू कोयका,

स्वारथका संसार, बना दिन दोयका।

'मेरी-मेरी' मान फिरत अभिमानमें,

इतराते नर मूढ़ एहि अज्ञानमें।

(८)

कूड़ा नेह-कुटुंब धनौ हित धायता,

जब घेरै जमराज करै को स्हायता?

अंतर-फूटी-आँख न सूझै आँधरे!

अजहूँ चेत अजान! हरीसे साध रे!

(९)

बार-बार नर-देह कहो कित पाइए?

गोविंदके गुन-गान कहो कब गाइए?

मत चूकै अवसान अबै तन माँ धरे,

पानी पहली पाल अज्ञानी बाँध रे!

(१०)

झूठा जग-जंजाल पड़्या तैं फंदमें,
छूटनकी नहिं करत, फिरत आनंदमें !
यामें तेरा कौन, समाँ जब अंतका,
उबरनका ऊपाय शरण इक संतका।

(११)

मंदिर माल बिलास खजाना मेड़ियाँ,
राज-भोग सुख-साज औ चंचल चेड़ियाँ।
रहता पास खवास हमेश हुजूरमें
ऐसे लाख असंख्य गये मिल धूरमें।

(१२)

मदमाते मगरूर वे मूँछ मरोड़ते,
नवल त्रियाका मोह छनक नहिं छोड़ते।
तीखे करते तरक, गरक मद-पानमें,
गये पलकमें ढलक तलब मैदानमें।

(१३)

फूलाँ सेज बिछायक तापर पोढ़ते,
आछे दुपटे साल दुसाले ओढ़ते ।
लेके दर्पण हाथ नीके मुख जोवते,
ले गये दूत उपाड़, रहे सब रोवते !

(१४)

अत्तर तेल फुलेल लगाते अंगमें,
अंध-धुंध दिन-रैन तियाके संगमें ।
महल अबासा बैठ करंता मौज रे !
ऐसे गये अपार, मिला नहिं खोज रे !

(१५)

रहते भीने छैल सदा रँग-रागमें
गजरा फुलाँ गुथंत धरंता पागमें ।
दर्पणमें मुख देखके मुछवा तानता,
जगमें वाका कोइ नाम नहिं जानता !

(१६)

महल फ़वारा हौजके मोजाँ माणता,

समरथ आप-समान और नहिं जाणता।

कैसा तेज प्रताप चलंता दूरमें,

भला-भला भूपाल गया जमपूरमें।

(१७)

सुंदर नारी संग हिँडोले झूलते,

पैन्ह पटंबर अंग फरंता फूलते।

जो थे खूबी खेलके बैठ बजारकी,

सो भी हो गये छैल न ढेरी छारकी!

(१८)

राज-कचेरी माहँ जे आदर पावते,

करते हुकम गरूर जरूर दिखावते।

पाग धनीकी बाँधके रहते अकड़ते,

रहे धरे धन मान, गये जम पकड़ते!

(१९)

इन्द्रपुरी-सी मान बसंती नगरियाँ,

भरती जल पनिहारि कनक सिर गगरियाँ।

हीरा लाल झबेर-जड़ी सुखमामई,

ऐसी पुरी उजाड़ भयंकर हो गई!

(२०)

होती जाके सीसपै छत्रकी छाइयाँ,

अटल फिरंती आन दसों दिसि माँइयाँ।

उदै-अस्त लूँ राज जिनूँका कहावता,

हो गये ढेरी-धूर नजर नहिं आवता।

(२१)

नित जाके दरबार झड़ंती नोबतां

मंत्री पास प्रवीन करंता म्होबता।

चतुरा लोगाँ चोज तरक अति सूझता,

तीनाहूँका नाम जगत नहिं बूझता!

(२२)

बंका किला बनायके तोपाँ साजियाँ,
माते मैगल द्वार हैं केते ताजियाँ।
नितप्रति आगे आय नचंती नायका,
वाको गया उपाड़ दूत जमरायका !

(२३)

माणिक हीरा लाल खजाना मोतियाँ।
सज राणी सिंगार सोलहों जोतियाँ।
दिन-दिन अधिक सुगंध लगाते देहमें,
ऐसे भोगी भूप मिले सब खेहमें !

(२४)

या तन-रंग-पतंग काल उड़ जायगा,
जमके द्वार जरूर खता बहु खायगा।
मनकी तज रे घात, बात सत मान ले,
मनुषाकार मुरार ताहि कूँ जान ले।

(२५)

यह दुनियाँ 'बाजिंद' पलकका पेखना,
यामें बहुत बिकार कहो क्या देखना !
सब जीवनका जीव, जगत आधार है,
जो न भजै भगवंत, भागमें छार है।

(२६)

दो-दो दीपक बाल महलमें सोवते,
नारीसे कर नेह जगत नहिँ जोवते।
सूँधा तेल लगाय पान मुख खायँगे,
बिना भजन भगवानके मिथ्या जायँगे।

(२७)

राम-नामकी लूट फबै है जीवको,
निसि-बासर कर ध्यान सुमर तू पीवको।
यहै बात परसिद्ध कहत सब गाम रे !
अधम अजामिल तरे नारायण-नाम रे !

(२८)

गाफिल हूए जीव कहो क्यों बनत है ?
या मानुषके साँस जो कोऊ गनत है !
जाग, लेय हरिनाम, कहाँ लों सोयहै ?
चक्कीके मुख परयो, सो मैदा होयहै ।

(२९)

आज सुनै कै काल, कहत हौं तूझको,
भाँवै बैरी जानकै जो तूँ मूझको ।
देखत अपनी दृष्टि खता क्या खात है !
लोहे कैसो ताव जनम यह जात है ।

(३०)

केते अर्जुन भीम जहाँ जसवंत-से,
केते गिनैं, असंख्य बली हनुमंत-से ।
जिनकी सुन-सुन हाँक महागिरि फाटते,
तिन घर खायो काल जो इंद्रहिँ डाटते ।

(३१)

हौं जाना कछु मीठ, अन्त वह तीत है,

देखो देह बिचार ये देह अनीत है।

पान फूल रस भोग अन्त सब रोग है,

प्रीतम प्रभुके नाम बिना सब सोग है।

(३२)

राम कहत कलि माहिं न डूबा कोइ रे !

अर्धनाम पाखान तरा, सब होइ रे !

कर्मकी केतिक बात बिलग है जायँगे,

हाथीके असवार कुते क्यों खायँगे ?

(३३)

कुञ्जर-मन मद-मत्त मरै तो मारिए,

कामिनि-कनक-कलेस टरै तो टारिए।

हरि-भक्तन सों नेह पलै तो पालिए;

राम-भजनमें देह गलै तो गालिए।

(३४)

घड़ी-घड़ी घड़ियाल पुकारै कही है,
बहुत गयी है अवधि अलप ही रही है।
सोवै कहा अचेत, जाग, जप पीव रे!
चलिहै आज कि काल बटाऊ-जीव रे!

(३५)

बिना बासका फूल न ताहि सराहिए,
बहुत मित्रकी नारिसों प्रीति न चाहिए।
सठ साहिबकी सेवा कबहुँ न कीजिए,
या असार संसारमें चित्त न दीजिए।

(३६)

जो जियमें कछु ज्ञान, पकड़ रह मनको,
निपटहि हरिको हेत, सुझावत जनको।
प्रीति-सहित दिन-रैन राम मुख बोलई,
रोटी लीये हाथ, नाथ सँग डोलई।

(३७)

बदन बिलोकत नैन, भई हौं बावरी,

धारे दण्ड बिभूत, पगन द्वै पावरी ।

कर जोगिनको भेस सकल जग डोलिहौं,

ऐसो मेरे नेम, पीव पिव बोलिहौं ।

(३८)

एकै नाम अनन्त किहूँके लीजिए,

जन्म-जन्मके पाप चुनौती दीजिए ।

लेकर चिनगी आन धरै तू अब्ब रे !

कोठी भरी कपास जाय जर सब्ब रे !

(३९)

गूदड़िया गुरु ज्ञान गुरूकै ज्ञानमैं,

माँग्या टूकड़ा खाय धणीकै ध्यानमैं ।

माया-मोह लगाइ पलकमैं भूलगा,

रोहीड़ा दिन चार जमींपर फूलगा ।

(४०)

ओढ़ैं साल-दुसाल क जामा जरकसी,
टेढ़ी बाँधैं पाग क दो-दो तरकसी।
खड़ा दलाँकै बीच कसे भट सोहता,
से नर खा गया काल सिंह ज्यौं गरजता।

(४१)

तीखा तुरी पलाण सँवारया राखता,
टेढी चालै चाल छायाँकों झाँकता।
हटवाड़ा बाजार खड़्या नर सोहता,
से नर खा गया काल सबै रह्या रोवता।

(४२)

हरि-जन बैठा होय जहाँ चलि जाइए,
हिरदै उपजै ज्ञान राम लव लाइए।
परिहरिए वा ठौड भगति नहिं रामकी,
बींद बिहूणी जान कहो कुण कामकी।

(४३)

बाजिंदा बाजी रची, जैसे संभल-फूल ।
दिनाँ चारका देखना, अन्त धूलकी धूल ॥*

कह कह बचन कठोर खरूँड न छोलिए,
सीतल राख सुभाव सबनसौं बोलिए।
आपन सीतल होइ औरकों कीजिए,
बलतीमैं सुन मिंत ! न पूलो दीजिए ।
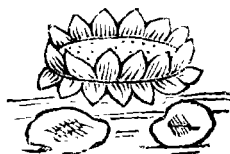
* कहीं-कहीं कड़ेके पहले एक दोहा भी दिया गया है ।

बुल्लेशाह

(१)

कद मिलसी मैं बिरहों सताई नूँ।
आप न आवै, ना लिखि भेजै,
भट्टि अजे ही लाई नूँ।
तैं जेहा कोइ होर नाँ जाणा,
मैं तनि सूल सवाई नूँ॥
रात-दिनें आराम न मैंनूँ,
खावै बिरह कसाई नूँ।
'बुल्लेशाह' धृग जीवन मेरा,
जौंलग दरस दिखाई नूँ॥

(२)

टुक बूझ कौन छप आया है ?
कइ नुकतेमें जो फेर पड़ा,
तब ऐन-गैनका नाम धरा ;

जब मुरसिद नुकता दूर किया,
बत ऐनों ऐन कहाया है ॥
तुसीं इलम किताबाँ पढ़दे हो,
केहे उलटे माने करदे हो ;
बेमूजब ऐवें लड़दे हो,
केहा उलटा बेद पढ़ाया है ॥
दुइ दूर करो, कोई सोर नहीं,
हिन्दु-तुरक कोई होर नहीं ;
सब साधु लखो, कोई चोर नहीं,
घट-घटमें आप समाया है ॥
ना मैं मुल्ला, ना मैं काजी,
ना मैं सुन्नी, ना मैं हाजी ;
'बुल्लेशाह', नाल लाई बाजी,
अनहद सबद बजाया है ॥

(३)

माटी खुदी करेंदी यार ।

माटी जोड़ा, माटी घोड़ा,
माटीदा असवार ॥
माटी माटीनूँ मारन लागी,
माटीदे हथियार ।
जिस माटीपर बहुती माटी,
तिस माटी हङ्कार ॥
माटी बाग, बगीचा माटी,
माटीदी गुलजार ।
माटी माटीनूँ देखन आई,
है माटीदी बहार ॥
हँस-खेल फिर माटी होई,
पौंदी पाँव पसार ।
'बुल्लेशाह' बुझारत बूझी,
लाह सिरों भों मार ॥

(४)

अब तो जाग मुसाफिर प्यारे !
रैन घटी, लटके सब तारे।
आवा गौन सराईं डेरे,
साथ तयार मुसाफिर तेरे,
अजे न सुनदा कूच नकारे।
कर ले आज करनदा वेला,
बहुरि न होसी आवन तेरा,
साथ तेरा चल चल्ल पुकारे।
आपो अपने लाहे दौड़ी,
क्या सरधन क्या निरधन बौरी,
लाहा नाम तू लेहु सँभारे।
'बुल्ले' सहुदी पैरी परिये,
गफलत छोड़ हीला कुछ करिये,
मिरग जतन बिन खेत उजारे॥

आदिल

(१)

मुकुटकी चटक, लटक बिबि कुंडलकी,
भौंहकी मटक नेकु आँखिन देखाउ रे !
एरे बनवारी, बलिहारी जाउँ तेरी, मेरी
गैल किन आय नेकु गायन चराउ रे !
'आदिल' सुजान रूप गुनके निधान कान्ह ,
बाँसुरी बजाय तन-तपन बुझाउ रे !
नन्दके किसोर, चित-चोर, मोर-पंखवारे,
बंसीवारे साँवरे पियारे, इत आउ रे !

मकसूद

(१)

लगा भादों मुझे दुख देने भारी,

घटा चहुँ ओर झुक आई है सारी।

भरी जल थल चढ़ीं नदियोंकी धारें,

सखी, अबतक न आये पी हमारे।

घटा कारी अँधेरी नित डरावै,

पिया बिन नींद बिरहिनको न आवै।

अरे कागा, तू उड़के जा बिदेसा,

सलोने स्यामको लेकर सँदेसा।

ये सब हालत वहाँ तकरीर कीजो,

मेरा साबित गुनह तकसीर कीजो।

कि उस जोगिनको तुम क्यों छोड़ बैठे ?

तरफ उसकीसे मुँह क्यों मोड़ बैठे ?

मुझे गम दिन-ब-दिन खाने लगा है,

अजलका दिन नजर आने लगा है।

न जानूँ दरस पीका कब मिलेगा,

कमल इस मेरे जीका कब खिलेगा।

सखी, यह मास भादो भी सिधारा,

न आया आह वह प्रीतम पियारा।

दिवानी पीकी मैं मेरा पिया है,

पियाका नाम सुमरन मैं किया है॥

मौजदीन

(१)

इतनी कोई कहो हमारी,

मनमोहन ब्रजराज कुँवरसों नारी ।

पाव परसकर दरसन कीजो,

दूजा जोर दोउकर ठारी—

फिर पाछे इतनी कहि दीजो,

सुध लीन्हीं न एकहूँ बारी ।

फागुन आयो झाँझ डफ बाजै

भीर भई अति भारी ।

मोहिं तो आस तिहारे मिलनकी,

भूल गई सुध सारी ।

मोहिं गुलाल लाल बिन तोरे,

भई है रैन अँधियारी ।

अँसुवनकौ अब रंग बनो है,
नैन बने पिचकारी ।
वृन्दाबनकी कुंजगलिनमें,
ढूँढ़त ढूँढ़त हारी ।
दैहौ दरस मोहि अपनी मौजसे
एहो कृष्ण मुरारी,
पिया मोहि आस तिहारी ॥

वाहिद

(१)

सुन्दर सुजानपर, मन्द मुसुकानपर,
बाँसुरीकी तानपर ठौरन ठगी रहै ।
मूरति बिसालपर, कंचनकी मालपर,
खंजन-सी चालपर खौरन खगी रहै ॥
भौंहें धनु मैनपर, लोने जुग नैनपर,
सुद्ध रस बैनपर, 'वाहिद' पगी रहै ।
चंचल वा तनपर, साँवरे बदनपर,
नन्दके नँदनपर लगन लगी रहै ॥

दीन दरवेश

(१)

हिन्दू कहैं सो हम बड़े, मुसलमान कहैं हम्म ।
एक मूँग दो फाड़ हैं, कुण जादा कुण कम्म ॥
कुण जादा कुण कम्म, कभी करना नहिं कजिया ।
एक भगत हो राम, दूजा रहिमानसे रजिया ॥
कहै 'दीन दरवेश' दोय सरिता मिल सिन्धू ।
सबका साहब एक, एक मुसलिम इक हिन्दू ॥

(२)

गड़े नगारे कूचके, छिनभर छाना नाहिं ।
कौन आज, को कालको, पाव पलकके माहिं ॥
पाव पलकके माहिं, समझ ले मनुवा मेरा ।
धरा रहै धन-माल, होयगा जंगल डेरा ॥
कहै 'दीन दरवेश,' गर्व मत करै गँवारे !
छिनभर छाना नाहिं, कूचके गड़े नगारे ॥

(३)

बन्दा जानै मैं करौं, करनहार करतार।
तेरा किया न होयगा, होगा होवनहार॥
होगा होवनहार, बोझ नर योंहि उठावै।
जो बिधि लिखा ललाट प्रतछ फल तैसा पावै॥
कहै 'दीन दरवेश' हुकमसे पान हलन्दा।
करनहार करतार, करेगा क्या तू बन्दा ?॥

(४)

बन्दा, बहुत न फूलिये, खुदा खिवेगा नाहिं।
जोर जुलम कीजै नहीं मिरतलोकके माहिं॥
मिरतलोकके माहिं, तजुरबा तुरत दिखावै।
जो नर करै गुमान, सोइ जग खत्ता खावै॥
कहै 'दीन दरवेश' भूल मत गाफिल गन्दा !
मिरतलोकके माहिं फूलिये बहुत न बन्दा !॥

अफ़सोस

(१)

का सँग फाग मचाऊँ री,

कुबजा-सँग गिरधारी रहत हैं।

अँसुअनको सखि रंग बनायो,

दोउ नैना पिचकारी रहत हैं।

बिरहमें कल न परत पल-छिन हूँ,

ब्याकुल सखियाँ सारी रहत हैं।

निसिदिन कृष्ण-मिलनकों सखियाँ,

आस लगाये ठाढ़ी रहत हैं।

'अफ़सोस' पियाकी नेह-सुरतिया

निरखत नर औ नारी रहत हैं॥

काजिम

(१)

फाग खेलन कैसे जाऊँ सखी री,
हरि-हाथन पिचकारी रहति है।
सबकी चुनरिया कुसुम-रँग-बोरी,
मोरी चुनरिया गुलनारी रहति है।
कोई सखी गावति, कोई बजावति,
हमको तो सुरत तिहारी रहति है।
कहत है 'काजिम' अपनी सखीसों,
सैयाँकी सुरत मतवारी रहति है॥

खालस

(१)

तुम नाम-जपन क्यों छोड़ दिया ?
क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा,
सत्य बचन क्यों छोड़ दिया ?
झूठे जगमें दिल ललचाकर,
असल वतन क्यों छोड़ दिया ?
कौड़ीको तो खूब सँभाला,
लाल रतन क्यों छोड़ दिया ?
जिन सुमिरनसे अति सुख पावै,
तिन सुमिरन क्यों छोड़ दिया ?
'खालस' एक भगवान-भरोसे,
तन-मन-धन क्यों छोड़ दिया ?

(२)

जिन्हों घर झूमते हाथी,
हजारों लाख थे साथी ;

उन्हींको खा गई माटी,
तू खुशकर नींद क्यों सोया ?
नकारा कूचका बाजै,
कि मारू मौतका बाजै ;
ज्यों सावन मेघला गाजै,
तू खुशकर नींद क्यों सोया ?
जिन्हों घर लाल औ हीरे,
सदा मुख पानके बीड़े ;
उन्होंको खा गये कीड़े;
तू खुशकर नींद क्यों सोया ?
जिन्हों घर पालकी घोड़े,
जरी जरबफ़्तके जोड़े ;
वही अब मौतने तोड़े,
तू खुशकर नींद क्यों सोया ?
जिन्हों सँग नेह था तेरा,
किया उन खाकमें डेरा ;
न फिर करने गये फेरा,
तू खुशकर नींद क्यों सोया ?

बहजन

(१)

करैं अब कौन बहाना,
गवन हमरा नगिचाना !
सब सखियन मेरी चूनर मैली,
दूजे पिया-घर जाना ।
तीजे डर मोहि सास-ननदका,
चौथे पिया देहै ताना ॥
प्रेम-नगरकी राह कठिन है,
वहाँ रँगरेज सियाना ।
एक बोर दे दियो चुनरीमें,
तासों पिय पहिचाना ॥
राह चलत सतगुरु मिले 'बहजन'
उनका है नाम बखाना ।
मेहर भई उनकी जब मोपर,
तब ही लगी ठिकाना ॥

लतीफ़ हुसैन

(१)

ऊधो ! मोहन-मोह न जावै ।

जब-जब सुधि आवति है रहि-रहि,

तब-तब हिय बिचलावै ॥

बिरह-बिथा बेधति है उन बिन,

पल छिन चैन न आवै ।

काह करौं, कित जाउँ, कौन बिधि,

तनकी तपनि बुझावै ॥

ब्याकुल ग्वाल-बाल अति दीखत,

ब्रज-बनिता घबरावै ।

गाय-बच्छ डोलत अनाथ सम,

इत-उत हाय, रँभावै ॥

कंस-त्रास भीषण लखि सिगरो,

धीरज छूटो जावै ।

कौन बचाव करैगो, अब तो,

यह दुख असह लखावै ॥

जबलौं अवधि कंस-गृह पूरी,

करिकैं मोहन आवै।

तबलौं कौन उपाय करैं हम,

कोऊ नाहिं बतावै ॥

मंसूर

(१)

अगर है शौक मिलनेका,
तो हरदम लौ लगाता जा ।
जलाकर खुदनुमाईको,
भसम तनपर लगाता जा ॥
पकड़कर इश्क़की झाड़ू,
सफ़ाकर हिज्रए दिलको ।
दुईकी धूलको लेकर—
मुसल्लेपर उड़ाता जा ॥
मुसल्ला फाड़, तसबी तोड़,
किताबें डाल पानीमें ।
पकड़ तू दस्त फ़िरश्तोंका,
गुलाम उनका कहाता जा ॥
न मर भूखों, न रख रोज़ा,
न जा मसजिद, न कर सिजदा ।

वजूका तोड़ दे कूजा,
शराबे शौक पीता जा ॥
हमेशा खा, हमेशा पी,
न गफ़लतसे रहो इकदम ।
नशेमें सैर कर, अपनी
खुदीको तू जलाता जा ॥
न हो मुल्ला, न हो ब्रहमन,
दुईको छोड़कर पूजा ।
हुक्म है शाह कलंदरका,
अनलहक़ तू कहाता जा ॥
कहे मंसूर मस्ताना,
मैंने हक़ दिलमें पहचाना ।
वही मस्तोंका मयखाना,
उसीके बीच आता जा ॥

यकरंग

(१)

हरदम हरिनाम भजो री ।

जो हरदम हरिनामको भजिहौ,

मुक्ति है जैहै तोरी ।

पाप छोड़के पुन्य जो करिहौ,

तब बैकुंठ मिलो री,

करमसे धरम बनो री ।

'यकरंग' पियसों जाय कहौ कोई,

हर घर रंग मचो री,

सुर नर मुनि सब फाग खेलत हैं,

अपनी-अपनी जोरी ,

खबर कोई लेत न मोरी ॥

(२)

पिया मिलन कैसे जाओगी गोरी !

रंग-रूप सब जात रहो री ।

ना अच्छे गुन-ढँग, ना अच्छे जोबन,
मैली भई अब चूनरि तोरी ॥
करके सिंगार पिया-घर जैयो,
तब देखिहैं पिया तोरी ओरी ।
जाय कहौ कोई 'यकरंग' पियसों,
तुम बिन या गत हो गई मोरी ॥

(३)

मितवा रे, नेकीसे बेड़ा पार ।
जो मितवा तुम नेकी न करिहौ,
बुड़ि जैहौ मँझधार ॥
नेक करमसे धरम सुधरिहैं,
जीवनके दिन चार ।
'यकरंग' भागो खैर हशरकी,
जासे हो निसतार ॥

(४)

निसिदिन जो हरिका गुन गाय रे !
बिगड़ी बात वाकी सब बन जाय रे !

लाख कहूँ, मानै नहि एकहु,
अब कहो, कबलग हम समझायँ रे !
सोच-विचार करो कुछ 'यकरंग'
आख़िर बनत-बनत बन जाय रे !

(५)

साँवलिया मन भाया रे ।
सोहिनी सूरत मोहिनी मूरत,
हिरदै बीच समाया रे ।
देसमें ढूँढ़ा, विदेसमें ढूँढ़ा,
अंतको, अंत न पाया रे ॥
काहूमें अहमद, काहूमें ईसा,
काहूमें राम कहाया रे ।
सोच-विचार कहै 'यकरंग' पिया,
जिन ढूँढ़ा तिन पाया रे ॥

कायम

(१)

गुरु बिनु होरी कौन खेलावै,
कोई पंथ लगावै ॥
करै कौन निर्मल या जीको,
माया मनतें छुड़ावै ।
फीको रंग जगतके ऊपर,
पीको रंग चढ़ावै ॥
लाल-गुलाल लगाय हाथसों,
भरम अबीर उड़ावै ।
तीन लोककी माया फूकके,
ऐसी फाग रमावै ॥
हरि हेरत मैं फिरति बावरी,
नैननिमें कब आवै ।
हरिको लखि 'कायम' रसियासों,
काहे न धूम मचावै ॥

निज़ामुद्दीन औलिया

(१)

परबत-बाँस मँगाव मेरे बाबुल !
नीके मड़वा छाव रे !
सोना दीन्हा, रूपा दीन्हा,
बाबुल दिल-दरयाव रे !
हाथी दीन्हा, घोड़ा दीन्हा,
बहुत-बहुत मन चाव रे !
डोलिया फँदाय पिया लै चलिहै,
अब सँग नहिं कोई आव रे !
गुड़िया खेलन माँके घर रह गई,
नहिं खेलनको दाव रे !
'निज़ामुद्दीन औलिया' बहियाँ पकरि चले,
धरिहौं वाके पाँव रे !

फ़रहत

(१)

वृषभानु-नंदिनी झूलैं अली,
आनंद-कंद ब्रजचंद साथ ।
सारद, गनेस, नारद, दिनेस,
सनकादिक ब्रह्मादिक सुरेस,
हुलसत महेस बमभोलानाथ ।
कोयल-समान सखियनकी कूक,
'फ़रहत' चंद्रावलि देत झूँक,
श्रीनंदनंद गले डाल हाथ ॥

(२)

बंसी मुखसों लगाय ठाढ़े श्रीराधावर,
मधुर-मधुर बजत धुन सुन सब गोपी बेहाल ।
थिरक-थिरक नाचै, मानों घन बिच दामिनि चमकै,
कारे मतवारे रतनारे दृग लटक चाल ।

सीस मुकुट चमकै, मकराकृत कुंडल दमकै,
'फ़रहत' अति प्यारी घुँघरारी अलक, तिलक भाल॥

(३)

मारो मारो हो स्याम पिचकारी हो ।
ताक लगाये खड़ी सखियन सँग,
ओट लिये राधा प्यारी हो ।
देखो देखो स्याम वहै कोउ आवति,
अबीर लिये भरि थारी हो ॥
इक पिचकारी और प्रभु मारो,
भींज जाय तन-सारी हो !
'फ़रहत' निरखि-निरखि यह लीला,
हरि-चरनन बलिहारी हो ॥

काज़ी अशरफ़ महमूद

(१)

ठुमुक-ठुमुक पग, कुमुक-कुंज-मग
चपल चरण हरि आये ,
हो हो चपल चरण हरि आये ।
मेरे प्राण-भुलावन आये ,
मेरे नयन-लुभावन आये ।
निमिक-झिमिक-झिम,
निमिक-झिमिक-झिम,
नर्तन पद-व्रज आये,
हो हो नर्तन पद-व्रज आये ।
मेरे प्राण-भुलावन आये ,
मेरे नयन-लुभावन आये ।
अरुण करुण-सम
छिन्न-भिन्न तम

करन बाल-रवि आये,
हो हो करन बाल-रवि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये,
मेरे नयन-लुभावन आये।
अमल कमल कर
मुरलि मधुर धर
वंशी बजावन आये,
हो हो वंशी बजावन आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये,
मेरे नयन-लुभावन आये।
पुंज पुंज हर,
कुंज गुंजभर,
भृंग-रंग हरि आये,
हो हो भृंग-रंग हरि आये।

मेरे प्राण-भुलावन आये ,
मेरे नयन-लुभावन आये ।

झुन झुन दुल-दुल,
मंजुल बुल-बुल
फुल मुकुल हरि आये,
हो हो फुल मुकुल हरि आये ।

मेरे प्राण-भुलावन आये ,
मेरे नयन-लुभावन आये ॥
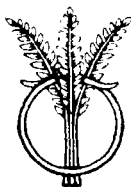
आलम

(१)

जसुदाके अजिर बिराजैं मनमोहनजू,
अंग रज लागे छबि छाजैं सुरपालकी ।
छोटे-छोटे आछे पग घुँघुरू घूमत घने,
जातें चित हित लागै शोभा बाल जालकी ॥
आछी बतियाँ सुनावै छिन छाँड़िबो न भावै,
छातीसों छपावै लागै छोह वा दयालकी ।
हेरि ब्रज-नारी हारी वारि फेरि डारी सब,
'आलम' बलैया लीजै ऐसे नंदलालकी ॥

(२)

मुकता मनि पीत हरी बनमाल सु
तो सुर चापु प्रकास किये जनु ।
भूषन दामिनि दीपति है
धुरवा सित चन्दन खोर किये तनु ॥

'आलम' धार सुधा मुरली
बरसा पपिहा ब्रजनारिनको पनु ।
आवत हैं बनते घनसे लखि
री सजनी घनस्याम सदा-घनु ॥

तालिब शाह

(१)

महबूब बागे सुहागे बने हैं,
सुमोहन गरे माल फूलौं हिये हैं।
महारंग माते अमाते मदनके,
विलोकत बदन खौरि चन्दन दिये हैं॥
यही वेश हरिदेव भृकुटी तुम्हारे,
सुलकुटी भँवर लेख या लख लिये हैं।
दिवाना हुआ है निमाना दरशका,
सुतालिब वहीं श्याम गिरवर लिये हैं॥

महबूब

(१)

आगे धेनु धारि गेरि ग्वालन कतार तामें,
फेरि-फेरि टेरि धौरी धूमरीन गनते ।
पोंछि पचकारन अँगोछनसों पोंछि पोंछि,
चूमि चारु चरण चलावै सु-वचनतें ॥
कहै महबूब जरा मुरली अधर बर,
फूँकि दई खरज निखादके सुरनते ।
अमित अनंद भरे, कन्द छबि वृन्दवत,
मंदगति आवत मुकुंद मधुवनते ॥

नफ़ीस ख़लीली

(१)

कन्हैयाकी आँखें हिरन-सी नशीली।
कन्हैयाकी शोखी कली-सी रसीली॥
कन्हैयाकी छबि दिल उड़ा लेनेवाली।
कन्हैयाकी सूरत लुभा लेनेवाली॥
कन्हैयाकी हर बातमें एक रस है।
कन्हैयाका दीदार सीमीं क़फ़स है॥
कभी गोपियोंमें जो पनघटपै आये।
वह नखरेमें आईं तो ये हठपै आये॥
किसीका सलामत दुपट्टा न छोड़ा।
जो भागीं तो कंकड़से मटकोंको फोड़ा॥
जो हाथ आई उसकी मरोड़ी कलाई।
बहुत कसमसाई न छोड़ी कलाई॥
बिठाया ज़मींपर पकड़कर किसीको।
रखा बाँसुरीसे जकड़कर किसीको॥

वह कहती हैं—'अब शाम होती है प्यारे !'
यह कहते हैं—'क्यों आईं जमना किनारे ?'
ग्वालिनका मक्खन चुराकर जो भागे ।
वह लाईं शिकायत जशोदाके आगे ॥
कहा—'तेरा मोहन सताता बहुत है ।
चुराता तो है, पर गिराता बहुत है ॥'
कई एक पहलेसे घरमें खड़ी हैं ।
जसोदासे सब बारी-बारी लड़ी हैं ॥
वहीं नागहाँ नंदका लाल आया ।
क़यामतकी चलता हुआ चाल आया ॥
कहा दूरसे—'झूठ कहती हैं माता ।
इसी ताकमें यह तो रहती हैं माता ॥
शिकायात अरज़ाँ, मज़ाक़ इनके सस्ते ।
कहीं जाऊँ तो रोक लेती हैं रस्ते ॥
ये छेड़ें मुझे और दुहाई न दूँ मैं ।
जो ठोकर, झटककर कलाई न दूँ मैं ॥

जो पनघटपै इनको दिखाई न दूँ मैं।
जो मुर्ली बजाता सुनाई न दूँ मैं॥
तड़पती हैं बेचैन होती हैं क्या-क्या।
मेरे ग़ममें आँसू पिरोती हैं क्या-क्या॥
न शबको मिला हूँ, न दिनको मिला हूँ।
महीनोंके बाद आज इनको मिला हूँ॥
ये झूठी हैं गर शिकवा-बर-लब हैं आईं।
मुझे देखनेके लिये सब हैं आईं॥'

सैय्यद कासिम अली

(१)

मोहन प्यारे जरा गलियोंमें हमारी आजा !
आजा, आजा, इधर ऐ कृष्ण कन्हैया ! आजा !
दुःख हरनेके लिये तूने न किया है क्या-क्या ?
फिर वह बंसी लिये जमुनाके किनारे आजा !
लाखों गौएँ तेरी अब फिरती हैं मारी-मारी,
लगन तुझसे ही लगी नंद-दुलारे आजा !
तेरी इस भूमिमें छाई है घटा जुल्मोंकी,
तिलमिलाते हुए भारतको बचा जा, आजा !
परदये गैबसे हो जायँ इशारे, तेरे,
अब नहीं ताब ग़मे हिज्रकी प्यारे आजा !
जल्द आ कि तेरे वास्ते 'अली' व्याकुल है,
कर्मभूमिमें वही कर्म सिखाने आजा !

श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारकी
कुछ श्रेष्ठ पुस्तकें
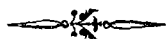
विनय-पत्रिका–(गो० तुलसीदासजीकृत) सटीक, सचित्र मू० १) सजिल्द	···	१।)
नैवेद्य–सचित्र मू० ॥=) सजिल्द	···	।॥-)
तुलसीदल–सचित्र मूल्य ॥) सजिल्द	···	॥≡)
भक्त बालक–सचित्र मू०	···	।-)
भक्त नारी–सचित्र मू०	···	।-)
भक्त-पञ्चरत्न–सचित्र मू०	···	।-)
भजन-संग्रह पाँचवाँ भाग (पत्र-पुष्प)–सचित्र मू०		=)
मानव-धर्म–मू०	···	≡)
साधन-पथ–सचित्र मू०	···	=)॥
स्त्री-धर्मप्रश्नोत्तरी–सचित्र मू०	···	=)
आनन्दकी लहरें–सचित्र मू०	···	-)॥
मनको वश करनेके उपाय–मू०	···	-)।
ब्रह्मचर्य–मू०	···	-)
समाज-सुधार–मू०	···	-)
दिव्य सन्देश–मू०	···	)।

पता—गीताप्रेस, गोरखपुर